सदाचार और शिष्टाचार

(प्रत्येक युवक-युवती तथा उनके संरक्षकों के लिये अपूर्व पुस्तक)

लेखक और सम्पादक—

श्री रामप्यारे त्रिपाठी 'किशनपुरी'

R. P. Tripati

भूतपूर्व अध्यापक

यू०पी० स्कूल कानन (कारिजर) जिला बांदा तथा सिजमी (फतेहपुर)

और गांव [illegible] सोजी स्कूल किशनपुर जि० फतेहपुर।

प्रकाशक—

निराकार पुस्तकालय

पुस्तक प्रकाशक और विक्रेता

बनारस सिटी

प्रथम संस्करण	१९३७	सजिल्द १)

मुद्रकः—
महादेव प्रसाद
अर्जुन प्रेस, कबीरचौरा, काशी

प्राक्कथन

पुस्तक प्रकाशकों की कृपा से जहाँ ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये अच्छी से अच्छी पुस्तकें आज पाई जाती हैं उससे कहीं अधिक काम-विज्ञान की विविध पुस्तकें प्रकाश में आ रही हैं। इन दोनों के संघर्ष में कौन अधिक प्रचार पाकर आगे बढ़ेगा यह तो भविष्य ही बतावेगा परन्तु वर्तमान दूषित वायुमण्डल को देख कर तो यही कहना पड़ता है कि ब्रह्मचर्य का अभाव हो रहा है।

चिरकाल से ब्रह्मचर्य की महिमा के गुण सुनते २ कान पक गये परन्तु आज तक कहीं इसका प्रबंध भी न किया गया कि आखिर इसका पालन किस भाँति किया जाय। जहाँ कहीं कुछ इस तरफ ध्यान दिया गया है वह इतना अव्यवहारिक है कि जिसका कुछ हद हिसाब नहीं। धर्म और आदर्श की आड़ में व्यर्थ प्रपंच करके किसी का चाहे कुछ लाभ हो या न हो नाम कमाने की चेष्टा ही होती है।

वास्तव में ब्रह्मचर्य मनुष्य-समाज के लिये अमृत है। जिस काल में इस पद्धति की स्थापना की गई थी वह सत्य का युग था किन्तु समय के फेर ने मनुष्य को स्वार्थी बना डाला और यही कारण है कि आज देश में ब्रह्मचर्य का नाश हो रहा है। यदि भारत में पुनः अपना गौरव स्थापित कर अतीत का सुख प्राप्त करना है तो कोरे ब्रह्मचर्य की कल्पना का त्याग कर सदाचार और शिष्टाचार की रक्षा करने में कटिबद्ध हो जाना चाहिये इसी में कल्याण है।

ऐसे समय पर यह छोटी पुस्तक "सदाचार और शिष्टाचार" यदि कुछ उचित मार्ग बता सके तो हम अपना परिश्रम सफल समझेंगे।

लेखकः—

विषय सूची

—**—

सदाचार और शिष्टाचार

आज की स्थिति

प्रकृति की रचना बड़ी विचित्र है। आज संसार में जितनी वस्तुयें दृष्टिगोचर हो रही हैं सभी अपनी २ अलौकिक छटा का अनुपम दृश्य दिखाने के लिये उतावली सी जान पड़ती हैं। सभी सुखी हैं। इनके हृदय में यह बात खूब अच्छी तरह जमी हुई है कि विश्व की समस्त शक्तियाँ यदि हममें समा जातीं तो क्या ही अच्छा होता!

सदाचार और शिष्टाचार

हम इस अलौकिक शक्ति को प्राप्त करने के पश्चात् बड़े से बड़े कठिन कार्यों को पल मारते तय कर लेते और नैसर्गिक सुखों को प्राप्ति करके सुखों की नवीन सृष्टि कर लेते। परन्तु क्या वह कभी यह विचार करने के लिये तैयार हुए कि जिन वस्तुओं के लिये हमारा मन लालच में फँसा है अथवा जिस वस्तु को हम कामना कर रहे हैं उनके प्राप्त करने के लिये हमारे पास उचित साधन हैं या नहीं। जिन गुणों की बदौलत वह अलौकिक शक्ति प्राप्त कर सकते हैं उन्हें वो अपनी अज्ञानता के कारण नष्ट कर चुके हैं और आज भी उसको नित्य प्रति धधकती हुई अग्नि में स्वाहा करते जा रहे हैं। यद्यपि यह कोई छिपी हुई बात नहीं इस प्रकार का विचार रखने वाले स्वयं इस बात का अनुभव कर रहे हैं कि उनका वर्तमान मार्ग बहुत ही नष्टकारी है उनके आचार विचार ही इस बात के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं परन्तु फिर भी अज्ञानतावश अपने कुकृत्य को नहीं त्यागते और न कामरूपी दैत्य का संग छोड़ने का उद्यत ही होते हैं। आज संसार में दुखों की भीषण आँधियाँ और ववण्डर आने का यही मुख्य कारण है।

आज सृष्टि का प्रत्येक व्यक्ति वास्तविक सुख और उचित शक्ति के अभाव में फूट २ कर रो रहा है। इस समय साँसारिक उदर के अन्दर जिस विषैले (विषधर) जन्तु का विनाशक विष प्रभाव दिखा रहा है और नित्य प्रति जिसकी बदौलत वह

अधिकाधिक जीर्ण शीर्ण होता जाता है उसका नाम है विषय-वासना अथवा व्यभिचार !

ईश्वरीय सृष्टि में आज कोई भी देश ऐसा नहीं है जिसकी शानदार सभ्यता के अन्तर्गत पाप और व्यभिचार का बाजार गर्म न हो। विषय वासना की तपती हुई लपटों में राष्ट्रीय शक्तियों का हवन न हो रहा हो। दुधमुँहे बच्चे तक इस पिशाच के चक्कर में बेतरह फँस गये हैं। कुमारी बालिकायें तो इस तूफानी बला से अपना पिण्ड ही नहीं छुड़ा पातीं। प्रायः नित्य-प्रति समाचारपत्रों में इसप्रकार के अनेकों समाचार पढ़ने को मिला करते हैं। दिल दहल जाता है आत्मा काँप उठती है। मानवजीवन के मूल उद्देश्यों को याद करके वर्तमान संसार के मनुष्यों से घृणा उत्पन्न हो जाती है।

कहाँ तो एक ओर सुख समृद्धि की इच्छा, और दूसरी ओर इस प्रकार के घृणित कारनामों का अटूट संग्रह। क्या कोई व्यक्ति दावे से कह सकता है कि इसप्रकार के कुकृत्य करनेवाला कभी सफलता को प्राप्त हो सकता है। शराब पीनेवाला हमेशा इसी धुन में रहा करता है कि लोग उसे सदाचारी ही समझें। माँस खाने और वेश्या-गमन करनेवाला नित्य प्रति इसी उधेड़-बुन में रहता है कि उसे लोग अखण्ड ब्रह्मचारी ही समझें। लहसुन प्याज आदि तामसिक पदार्थों के खाने वाला इसी फिक्र में है कि उसके बदन से जो पसीना निकले वह गुलाब केवड़ा

और खस की रूह हो। इसी लिये इस दुर्गन्ध को धोने के लिये सनलाइट, पीयर्स और लक्स आदि साबुनों का इस्तेमाल किया करते हैं। यदि बबूल के पेड़ से आम के रसीले फल चाहने वाले वर्षों परिश्रम करने के पश्चात् भी सफलता न प्राप्त कर सकें अर्थात् अपनी वास्तविक शक्ति को सत्यानाश करके सच्चे सुखोंको न प्राप्तकर सकें तो इसमें किसका दोष! शारीरिक सुखों की प्राप्ति के लिये तो मानवीय शक्तियों का होम अनिवार्य है।

पृथ्वी पर आज जितने भी देश सभ्यता की श्रेणी में गिने जाते हैं उनमें कोई भी इस पाप वासना से अछूता नहीं है। इस दशा में भला अनपढ़ परतन्त्र और दाने दाने को मुहताज देश भारत भी इस रोग का शिकार हो जाय तो क्या आश्चर्य? आज हमारा देश भी विषय वासना के विषयुक्त कीड़ों के कारण त्राहि २ कर रहा है। समाचार पत्रों के कालम के कालम रंगे जा रहे हैं परन्तु इस तरफ किसी का ध्यान ही नहीं जाता। चतुर्दिग से पाप की ज्वालायें भस्म कर देने के लिये दौड़ी आ रही हैं। जन समुदाय अपने कर्तव्य को भूल कर चुम्बक की भाँति पाप मार्ग की ओर लपका चला जा रहा है। अप्राकृतिक व्यभि-चार कराल काल की भाँति मुँह फाड़कर छोटे २ होनहार बच्चे बच्चियों को निगले जा रहा है। कोई भी सामाजिक धार्मिक या राजनैतिक संस्था आज इसके पाश से मुक्त नहीं है सभी के हाथों में इसकी कटीली हथकड़ियाँ चढ़ी हुई हैं।

सदाचार और शिष्टाचार

बाल्यावस्था बड़ी कठिन आपत्ति के झकोरे में पड़ी हुई है। थोड़ी ही असावधानी के कारण सारा का सारा जीवन नष्ट हो जाता है। जितना मनोहर यह बाल्यजीवन होता है उतने ही प्रलोभन इसके नष्ट करने के लिये बवण्डर की भाँति मँडराया करते हैं। इस अमूल्य धनराशि को लूट लेने के लिये हर समय साधुवेषधारी डाकू दल मच्छरों की भाँति फिरा करते हैं। प्रायः देखा जाता है कि किसी बालक के 'परम मित्र' और 'अच्छे साथी' बनने के लिये लोग उतावले रहा करते हैं वास्तव में यही उनके घोर शत्रु होते हैं। बहुत से सभ्य डाकू बाल्यजीवन रस की प्यास से हर समय स्थान २ पर ताक लगाये बैठे रहते हैं। यह पापी दुरात्मा अपना जीवन तो प्रथम ही नष्ट कर चुके होते हैं अब अन्य बालकों को भी नष्ट करके ही प्रसन्न होना अपना धर्म समझते हैं। यह इसलिये कि हम तो स्वयं नष्ट हो ही चुके हैं दूसरे क्योंकर बचे रह जायँ अतः अपनी निर्लज्जता को छिपाने के लिये कामान्ध हो लावण्यमयी बालमूर्तियों की तलाश में चक्कर काटा करते हैं।

क्या आज कल के माता पिता इस प्रकार अगणित नर-पशुओं को चील कौवों की भाँति अपने सुकुमार युवक बच्चों के ऊपर जान देनेवाले दर्जनों मित्रों को देखकर, अथवा घर द्वार पर निशिदिन धरना देते देखकर कुछ भी सशंकित होते हैं? इस अवस्था में इनके इस प्रगाढ़ प्रेम का क्या गुप्त रहस्य है?

क्या वास्तविक रूप से यह सभी इस बालक के हितचिन्तक हैं ? नहीं २ कदापि नहीं ! यदि ऐसा ही वास्तव में होता तो आज असंख्य बालकों का जीवन नष्ट होता न देखा जाता। सच पूँछिये तो यह उगते हुए पौधे के लिये टिड्डियों का दल है जो विकसित कली को समूल नष्ट करने पर तुले हैं। नित्य प्रति नवीन चाह बढ़ाने वाले, बिना पैसे के गुलाम बनने वाले, बिना दाम (मुफ्त) सिनेमा थियेटर आदि रंग मंचों में ले जाने वाले, कहने के पहले ही साइकिल की सवारी तथा हारमोनियम बजाना सिखाने वाले, बिना माँग रिष्टवाच और चश्मा दे देने वाले, बिना मासिक वेतन लिये ही पढ़ाने के लिये उद्यत होने वाले मित्र, और बिना विशेष कारण ही अत्यधिक अटूट प्रेम दर्शाने वाले मास्टरों से, माता पिता को सदैव सतर्क रहना चाहिये। जान बूझ कर भी अनजान न बनना चाहिये और न इसे उपेक्षा ही की दृष्टि से देखना चाहिये। प्रायः देखा जाता है कि ऐसे स्थानों में संकोच करने के कारण बड़ी हानि उठानी पड़ती है।

माता पिता तथा संरक्षकों का कर्तव्य है कि वे सदैव बालकों पर निगाह रक्खें और उन्हें इस बात की शिक्षा बालपन ही में दे देवें कि उन्हें किस प्रकार के लोगों का साथ करना चाहिये। बालकों को समझ लेना चाहिये कि उनके खिले हुये स्वच्छ नील कमलवत सुन्दर लावण्यमय मुखचन्द्र और बड़े २ नेत्रों पर

प्राण विसर्जन करनेवाले, उनके प्राणों के ग्राहक वे दुष्ट भौंरे हैं जो उनका समस्त रस चूस लेने के पश्चात् उन्हें जीवन पर्य्यन्त दुःसह वेदनाओं में तड़पने के लिये त्याग देंगे। दिल और जान से मर मिटने वाले इन नरपशु मित्रों की आह भरी शुष्क आवाजों, फिरी हुई आँखें; फीका रंग, तथा लजीले मुखमण्डल से सुकुमार बालकों को यह मर्मभेदी संदेश ग्रहण करना चाहिये और सदैव सतर्क रहना चाहिये। जिगर का खून निकाल कर पत्र लिखने वाले इन खूनी खूँख्वारों से मौत के समान दूर रहना चाहिये। इस समय बालकों को चाहिये कि वह अपने सौन्दर्य रूपी कोष को छिपाकर रक्खें नहीं तो इन डाकुओं से बचना ही मुश्किल हो जायगा।

देश में इस प्रकार की विषम परिस्थिति क्यों कर उत्पन्न हुई इसका मुख्य कारण और कुछ नहीं आधुनिक शिक्षा है। स्कूल और कालिजों में जो पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं उनमें प्रायः प्रेम की व्यथायें और वियोग की कथायें ही अधिकतर रहती हैं। यदि अधिक छानबीन की जाय तो भले ही पुस्तक के किसी कोने पर एकाध वाक्य ब्रह्मचर्य और सदाचार के मिल जायँ।

सच बात तो यह है कि स्कूली शिक्षा में सदाचार और ब्रह्मचर्य की शिक्षा रह ही नहीं गई। फिर भला उन विद्यार्थियों को क्या पता कि ब्रह्मचर्य क्या वस्तु है? इससे मानव जीवन का क्या और कितना सम्बन्ध है और इससे मानव जीवन का किस

प्रकार विकास होता है। केवल इसी एक अज्ञानता के वश होकर बड़े २ शिक्षित नवयुवक आज कुशिक्षा के अन्धकार में भटक रहे हैं। वे कामोत्तेजक तथा विलास प्रिय सामिग्री के दास वन रहे हैं और शारीरिक शक्तियों का संहार कर रहे हैं। उन्हें इस वात का पत्ता ही नहीं होता कि शरीर को स्थायी रखने वाली नींव में हम अपने हाथों किस प्रकार नमक भर कर नष्ट कर देने की फिक्र में हैं। उन्हें सदैव यही धुन सवार है सोडावाटर की बोतल उनके पेट के उत्पन्न कब्ज को शांत करेगी। ब्रुश और कंघियाँ उनकी सुन्दरता की रक्षा करेंगी। साबुन, हेज़्लीन, स्नो. आदि उनके मुखमण्डल को सदैव ताज़ा बनाये रखने के लिये सामर्थवान हैं। वास्तव में यह सब बिलकुल झूठी और ग़लत धारणायें है। पर इसमें इनका दोष क्या है ? सच पूछिये तो इन्हें यही पाठ बचपन से पढ़ाया गया है, यही शिक्षा मिली है।

शहर, कस्बा, गाँव, कहीं भी देखिये सभी स्थानों में एक नहीं अगणित नवयुवक आज सड़कों और गलियों में फिरते हुये नजर आते हैं जो अपने माता पिता की अदूर्दशिता तथा अज्ञानता के कारण सर्वस्त्र खो कर बरवाद हो चुके हैं। उनके चेहरे पर तेज नहीं, ओज नहीं, चंचलता नहीं, शक्ति नहीं, सौन्दर्य नहीं। यह लोग विलासता और वासना रूपी दुष्टा सहचरी को गले लगाकर मानव जीवन के मूल तत्वों से हाथ धो बैठे हैं। इन्हीं के ऊपर इनके माता पिता का सारा भविष्य

निर्भर हैं। सारे कुटुम्ब की अभिलाषायें यही हैं, पर हा! शोक! वह तो स्वयं अपनी ही सहायता के लिये रो रहे हैं। उनके शरीर में इतनी भी शक्तियाँ शेष नहीं रह गई कि वह संसार के मैदान में उतर कर जीवन संग्राम रचा सकें और अपने पीछे चलने वाले परिवार का पालन पोषण कर सकें।

संसार में रहने के लिये, प्राणी मात्र को जीवन शक्ति की अत्यन्त आवश्यकता होती है। शक्ति ही सब कुछ है। जो व्यक्ति शक्तिशाली है वही सब कुछ है। संसार में सम्पत्ति और सुख तो हर प्रकार प्राप्त हो सकता है परन्तु शक्ति का प्राप्त होना बड़ी टेढ़ी खीर है। प्रायः देखा जाता है कि सम्पत्ति तो साहस और शक्तिके पीछे दौड़ा करती है। जिन लोगोंने अपनी सम्पत्ति को लुटा दिया है और शक्ति की रक्षा की है, वे दरिद्र होते हुए भी धनी और सुखी हैं, निर्धन होते हुये भी सम्पत्तिशाली हैं। उन्हें संसार की भयंकर से भयंकर परिस्थितियाँ भी उचित मार्ग से विचलित नहीं कर सकतीं। वे सदैव अपने स्थान पर उच्च-स्वर से सिंहनाद किया करते हैं। अतः यह सिद्ध है कि मानव जीवन के लिये शक्ति संचय करना परमावश्यक है।

हमारे धर्म शास्त्र और प्राचीन पुस्तकें शिक्षा-कोष हैं। पूर्व पुरुषोंने उनके अन्दर अपनी अनुभव-संचित धन राशि इकट्ठी कर रक्खी है परन्तु अविद्यान्धकार और कुशिक्षा की कृपा से हम उन बातों पर ध्यान नहीं देते और न उनसे किसी प्रकार की शिक्षा

ग्रहण करने की कोशिश ही करते हैं। यदि उन पर ध्यान दिया जावे तो इसमें सन्देह नहीं कि हमारी यह गिरी हुई हालत बहुत ही शीघ्र सुधर जाय, हमारे भाग्याकाश से अन्धकार के बादल तुरन्त हट जायँ और हमें अपने कर्तव्य का ज्ञान हो जावे।

ज्ञान ही मनुष्य का मार्ग प्रदर्शक है। ज्ञानहीन मनुष्य अंधे के समान हुआ करता है। मनुष्य होकर भी यदि कोई ज्ञान से शून्य है तो वह पशुओं की ही श्रेणी में रक्खा जाने योग्य है। पशु भी एक प्रकार का प्राणी है परन्तु वह अज्ञानी है। मनुष्य और पशु में इतना ही तो अन्तर है। इसी कारण संसार में पशु उपयोगी होते हुये भी अनुपयोगी ही रह जाता है।

ज्ञान का सहारा प्रत्येक व्यक्ति लिया करता है क्योंकि ज्ञान ही उसका उपदेशक और पथ-प्रदर्शक है। ज्ञान रूपी मित्र का साथ करने के लिये विश्वास की आवश्यकता होती है। बिना विश्वास के पूर्ण ज्ञान होना भी असम्भव है। इसके प्रमाण में ईश्वर, वायु, आकर्षण आदि अनेक पदार्थ हैं जिसे किसी ने आज तक नहीं देखा लेकिन विश्वास से सभी उसे मानते हैं। यदि मन में ज्ञान लाने की आवश्यकता हो तो पहले सारे संशय को दूर कर देना चाहिये। ऐसा करने से ज्ञान स्वयं ही उत्पन्न हो जाता है।

सदाचार और शिष्टाचार

कोई समय था जब भारत के विद्यार्थी समाज ने अपने ज्ञान शक्ति के कारण सारे संसार को अचम्भे में डाल रक्खा था, ठीक उसी भाँति आज भी युवक विद्यार्थियों को आगे बढ़ने की आवश्यकता है। सबके हृदयों में सदाचार और नीति की उच्च शिक्षायें ग्रहण करने की धुन हो। कभी बुरी संगति में जाने का ख्याल भी दिल में न लावें। विलासी और फैशन पर मरने वाले कुमार्गगामी साथियों से सदा दूर रहने का प्रयत्न करें। सादगी उनके जीवन का कण्ठहार हो। ईश्वर पर विश्वास हो। कुविचार उत्पन्न करनेवाले गायन न गायें। भोजन सदैव सात्विक खायें। विद्याध्ययन के लिये सदाचारी और त्यागी अध्यापक का होना ही आवश्यक है। इतना होने के पश्चात् भी माता पिता नित्य प्रति उनके दिनचर्या पर दृष्टि रक्खें और उन्हें दुर्गुणों से बचाने के लिये प्रयत्न करते रहें।

प्रायः १५-१६ वर्ष की आयु में बालकों को शुक्रोदय होता है। शुक्र नाम वीर्य का है। बरसात की पहिली अवस्था में जिस तरह बड़े जोर का पानी बरस कर नदी नद तालाब गाँव मैदान सबको अथाह भर कर उमड़ पड़ता है ठीक उसी प्रकार वीर्य भी जिस समय प्रथम पैदा होता है सारे शरीर में एकदम परिवर्तन के चिन्ह दिखाई देने लगते हैं इसी को प्रथम यौवन का उभार कहते हैं। इसी की बदौलत प्रायः लड़के आपस में मिलकर अनेकों प्रकार के उचित अनुचित कृत्य करते, सच्ची झूठी

कहानियों में भटकते, प्रेम प्रपंच रचते और अनेक कुवासनाओं में पड़कर नष्ट हो जाते हैं। यह बालक प्रत्येक बुराइयों से अनभिज्ञ रहा करते हैं वे यही नहीं जानते कि किसकी संगति अच्छी है और किसकी बुरी। स्कूल कालिजों में प्रायः प्रति दिन सैकड़ों बालकों से उनका संग हुआ करता है वे आपस में नित्य हँसते खेलते पाये जाते हैं। बहुधा यह देखने में आया है कि छोटे २ बालकों में कभी २ कामेच्छा जागृति हो जाती है बड़े २ बालकों का तो कहना ही क्या? यद्यपि वह बालक काम रहस्य को नहीं जानते लेकिन प्रकृति की देन गुप्त इन्द्रियाँ उन्हें सारा पाठ पढ़ा देती हैं वे आपस में इन्द्रियों को रगड़ने लगते हैं। जिसका फल यह होता है कि उनकी यह प्रकृति धीरे २ अधिक प्रबल हो जाती है उनमें अनेक दुर्गुण और काम वासना की कुभावनायें घुस जाती हैं। जाँच करने पर आज अधिकांश बालक इस प्रकार के पाये जाते हैं जो पिशाच व्यभिचार के चक्कर में पड़कर अपने हाथों अपना सर्वनाश कर चुके हैं। ऐसे बालक शौकीन, उच्छृंखल व्यसनी और एकान्त प्रेमी हुआ करते हैं। पढ़ने में उनकी तबीयत लगती ही नहीं एक २ क्लास में ३-३ साल तक पड़े रहते हैं। मुख की कान्ति, शरीर का ओज और साहस नष्ट हो जाता है। जवानी में ही वृद्धापन के चिन्ह दृष्टिगोचर होने लगते हैं।

इस प्रकार की कुवासनाओं में फँसे हुये बालक अपने दुष्ट

व्यापार का विवरण माता पिता पर प्रकट हो जाने से डरते हैं और सदैव माता पिता तथा गुरुवरों की नजरों से दूर रहने की फिक्र में रहा करते हैं। यह सब होते हुये भी माता पिता उनके इस कुप्रवृति पर ध्यान नहीं दिया करते और लड़के कुचक्रियों की संगति में पड़कर अपना सर्वस्व चौपट कर डालते हैं। संसार सागर में डूबने के लिये कुसंग भीषण भँवर है। इसी की बदौलत वह स्थिति स्वयम् ही पैदा हो जाती है जिसके कारण अपमान होना आरम्भ हो जाता है। कभी २ तो ऐसी स्थिति का सामना करना पड़ता है कि जेलों की हवा खानी पड़ती है और फाँसी की रस्सियों से गर्दन कसी जाती है।

अब यह स्पष्ट विदित हो गया है कि कुसंगति का असर बहुत ही जल्दी और बुरा हुआ करता है। वृद्ध पुरुषों का तो यहाँ तक कथन है कि चाहे घोर यन्त्रणा के साथ नर्क का बास स्वीकार कर ले परन्तु बुरे लोगों की संगति कभी भी न प्राप्त होवे। यदि माता पिता अपना तनिक भी कर्तव्य पालन करें और लड़कों को कुसंगति से हटाकर सुसंगति की ओर बढ़ने के लिये उत्साहित करें तो देखते ही देखते कुछ ही काल में अत्य-धिक सफलता प्राप्त हो सकती है। आचार्य शंकर ने तो सुसंगति के सम्बन्ध में यहाँ तक लिखा है कि सत्-संगति के कारण बुरी संगति छूट जाती है और बुरी संगति के छूटते ही विषयासक्ति से अप्रीति होती है इसके कारण सत्य से प्रेम बढ़ता है और

पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जाने पर मनुष्य मुक्ति को प्राप्त कर लेता है। सत्संग ही परमतीर्थ है, सत्संग ही परमपद है। यह सब जान-बूझ कर भी जो माता पिता अपने लड़कों को ऐसा उपदेश न देवें तो उनको अज्ञानी के सिवा और क्या कहें?

मादक वस्तुओं का सेवन जिधर देखिये उधर ही दिन-दिन बढ़ता चला जा रहा है। प्रायः सभी सभा सोसाइटियाँ जो सुधार का कार्य करती हैं उनके यहाँ ऐसे-ऐसे नियम बना रखे गये हैं कि मादक वस्तुओं का सेवन निषेध है। परन्तु यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि आज देश में कोई भी ऐसी संस्था नहीं है कि जिसके सदस्य इस पापी मादक की मादकता में लार न टपकाया करते हों। बड़े २ उपदेशक और व्याख्याता जो प्लेटफार्मों पर लम्बी २ स्पीचें झाड़ा करते हैं प्लेटफार्म से बाहर आते ही उन्हें किसी न किसी प्रकार का नशीला पदार्थ सेवन करते देखा जाता है। जब उपदेशकों की यह दशा है तो भला जो मूर्ख और अनपढ़ हैं उनको क्या पता कि नशा क्या बला है। जो रोगी, रोग को ही आरोग्यता जानता है उसके लिये आरोग्यता का सुख स्वप्न ही असम्भव है।

मादक वस्तुओं में शराब ताड़ी, गाँजा, भाँग अफियून, चरस चण्डू, तम्बाकू, सिगरेट, बीड़ी, चाय आदि हैं। यह बात एक नहीं अनेक बार सिद्ध की जा चुकी है कि उपरोक्त सभी वस्तुओं में नशा है और उनका सेवन निषेध है इसके लिये स्थान २ पर

अनेकों सभायें अब भी प्रचार के द्वारा हानि का वर्णन किया करती हैं। फिर भी इनका प्रचार दिनोंदिन बढ़ता ही जाता है। खेद के साथ कहना पड़ता है कि हमारे देशी भाषा के वह समाचार पत्र जो इन मादक वस्तुओं के प्रचार के विरोधी हैं अपने अनेक कालमों में कभी २ इनकी प्रशंसा के पुल बाँधा करते हैं और विज्ञापन के रूप में टके वसूल किया करते हैं। चाय जो हर प्रकार से मनुष्य के स्वास्थ्य का शोषण करती है अनेक प्रकार से उसका गुणगान कर जनताको ठगा जा रहा है। जितने ही गुण इसके बताये जाते हैं उतना ही अधिक प्रचार इसका बढ़ता जाता है। डाक्टरों का तो यहाँ तक कहना है कि इस चाय के सेवन से दाँतों में रोग पैदा हो जाते हैं अन्त में दाँत निकलवा देने पड़ते हैं परन्तु फिर भी इसकी तरफ किसीका ध्यान नहीं जाता। और चाय के विदेशी व स्वदेशी व्यापारी झूठी प्रशंसा करके मुफ्तमें चाय तैयार कर पिला रहे हैं। अब तो भारत सरकार ने आसाम के चाय बगीचों के विदेशी व्यापारियों की प्रार्थना पर कौंसिलों द्वारा कानून बनाकर प्रचार का रास्ता खोल दिया है और स्कूली पुस्तकों में पाठ रूप से पढ़ाये जाने की आज्ञा दी है। यह महा अनर्थ है।

आयुर्वेद शास्त्र का कथन है कि मादक वस्तुओं के सेवन से मनुष्य की बुद्धि मारी जाती है उसकी चैतन्य शक्ति क्षीणता को प्राप्त होती है और वह बिलकुल नष्ट हो जाती है। इन्द्रियों में

लोलुपता बढ़ जाती है। शारीरिक शक्ति क्षीण हो जाती है मादक वस्तुओं का सेवन करने वाला व्यक्ति संसार के किसी कार्य में उत्साह से हाथ नहीं बटा सकता।

बर्तमान काल में देश में मादक पदार्थों का जितना अधिक प्रचार है उतना तो शायद ही किसी समय में हुआ होगा। ऐसा कोई भी शहर, गाँव, कस्बा नहीं है जहाँ गाँजा भाँग अफयून, चरस आदि धुँआधार न उड़ता हो। दिन भर मजदूरी करके शाम तक चार आना पैदा करने वाला व्यक्ति अपनी गाढ़ी कमाई में से कम से कम दो आने अवश्य नशीली चीजों की भेंट कर देता है। आज तम्बाकू का तो घर २ प्रचार है। जहाँ अनपढ़ आदमी शराब गाँजा भाँग के मद के मतवाले हैं वहाँ शिक्षित समुदाय सिगरेट और बीड़ियों के द्वारा अपना कलेजा जला रहा है। किसी भी बड़े शहर में देखिये छोटे २ बच्चे सिगरेट मुँह में दबाये और धुँयें के गहरे बादल उड़ाते देखे जाते हैं। जब संसार की मृत्यु संख्या पर दृष्टि दी जाती है तो स्पष्ट विदित हो जाता है कि भारत इसके विकट चंगुलमें फँसा हुआ है। लेकिन यदि हम देश के कोने २ में फैली हुई नशीली चीजों का प्रचार और छोटे २ बच्चों को उसके द्वारा नष्ट होते देखते हैं तो दुःख से हृदय दहल जाता है। यदि सत्य मानिये तो यह अवश्य कहा जा सकता है कि इस सभ्यता के युग में भी भारत सबसे अधिक

मादक वस्तुओं का सेवन करता है देश की अधोगति कमजोरी और गुलामी का यह भी एक कारण है।

इन्हीं वस्तुओं के द्वारा राष्ट्र की वह शक्ति क्षीण हो गई है जिससे किसी राष्ट्र का विकास और कल्याण हुआ करता है। उदाहरण के रूप से यदि आज देश की जन संख्या ३५ करोड़ मान ली जावे इसमें आधी जन संख्या बच्चों और स्त्रियों की छोड़ दें जो बिलकुल ही इन मादक वस्तुओं को न सेवन करते हों तम्बाकू के सेवन का साढ़े सत्रह करोड़ जन संख्या में यदि एक केवल मनुष्य के लिये रोजाना औसत एक पैसा इस खर्चके लिये रख लें तो ॥) प्रति मनुष्य प्रति मास के हिसाब से कुल देश में मासिक खर्च ८ करोड़ ७५ लाख रुपया केवल तम्बाकू से होता है। यह रुपया केवल छीं-थू-फुर्र में उड़ जाता है। नाक से छीं करके, चूना के साथ मिलाकर खाने वाले थू के रास्ते और बीड़ी सिगरेट के द्वारा फुर्र करके पौने नौ करोड़ रुपया मासिक तम्बाकू चाट जाती है तो अन्य वस्तुओं को जोड़ कर आकड़े निकालने के लिये उन्हीं पत्थर के कलेजे वाले मनुष्यों की जरूरत है जो अपना दिल और दिमाग नशीली भट्ठी में भस्म करके पाषाण हृदय हो चुके हैं।

यह बात तो प्रायः सभी जानते हैं कि ऐसा कोई नशा नहीं है कि जिसमें विष न हो। इसी मुख्य तत्व को लक्ष्य करके प्राचीन भारतीय जीवन-वैज्ञानिकों ने स्पष्ट कह दिया है कि

२

मादक वस्तुओं के सेवनसे मनुष्य जीवन उसी प्रकार धीरे २ नष्ट होता है जिस प्रकार तेल की कमी से दीपक का प्रकाश कम होता हुआ अन्तमें बुझ जाता है। यह ध्रुव सत्य है कि मादक वस्तुओं के सेवन से शरीर का वीर्य दूषित और पतला होकर नष्ट हो जाता है। जिस प्रकार भीषण ग्रीष्म ताप अगाध जल को सरिता को सुखा देता है उसीप्रकार नशीली वस्तुयें वीर्य का सत्यानाश कर डालती हैं। इसी सबब से नष्ट वीर्य मनुष्य साहस के अभाव में राजयक्ष्मा के शिकार हो जाते हैं। आजतक कोई आदमी ऐसा खोजने पर भी नहीं पाया जा सका जो गाँजा चरस से प्रेम करता हुआ भयंकर स्वांस और खांसी से बच सका हो और उसके गले से सड़ा गला बलगम न निकलता हो। नशेबाज, अघोरी, बैरागी, उदासी, संन्यासी प्रायः प्रकट कहा करते हैं कि हमलोग तो इसलिये इन नशीली वस्तुओं का सेवन करते हैं कि हमारा वीर्य नष्ट हो जाय! क्या इतना सुनकर भी लोगों की बुद्धि का परदा नहीं हटता?

लड़कों में यह अवगुण या तो अपने माता पिता के द्वारा उत्पन्न होता है या मादक वस्तु सेवन करने वाले लोगों की संगति से। जो लड़के असमयमें ही इन वस्तुओंके जाल में फँस जाते हैं वह फिर कब सुधर सकते हैं। इसलिये माता पिता का कर्तव्य है कि बालकों को इस पिशाच के चक्कर से बचावें। जब देखें कि लड़का किसी ऐसी दूकान पर जा रहा है जहाँ पर

नशीली वस्तुयें बिका करती हैं अथवा नशेबाजों की संगति में घूमते पा जावें तो कड़ी ताड़ना के साथ इस ऐब को दूर करने का प्रयत्न करें। अधिक पैसे पाने के कारण ही लड़के नशीली वस्तुयें सेवन करते रहते हैं। प्रायः अमीरों के लड़कों में यह दोष अधिक होता है। उन्हीं को देखकर मध्यम श्रेणी के लोग भी बिगड़ जाते हैं। अधिक पैसे का व्यवहार जहाँ नशीली वस्तुओं का सेवन सिखाता है वहाँ विषय और विलासप्रिय वस्तुओं का शौक भी उत्पन्न कर देता है जो व्यभिचार की ओर अग्रसर करता है। बाजार की चटपटी चाट और मिठाइयाँ उनके दिमाग़ और मेदे को चौपट कर डालते हैं।

एक भिखारी युवक जो रुग्णावस्था में एक डाक्टर के पास इलाज कराने के लिये भरती हुआ था अपनी पूर्व राम कहानी इस प्रकार सुनाई। "एक दिन जब मैं बाजार निकला तो मेरी दृष्टि एक कोठे पर बैठी वेश्या पर पड़ी। देखते ही मैं आसक्त हो गया। यहाँ तक कि उसके पास चला गया और फिर तो ऐसी स्थिति पैदा हो गई कि नित्य ही उसके पास जाने लगा कुछ ही काल में गर्मी सुजाक आदि भयंकर रोग उत्पन्न हो गये। पिता के मर जाने के बाद पास में पैसा न होने से भिखारी हो गया और इस दशा को पहुँचा यदि पिता माता ने मुझे लड़कपन में अधिक पैसे न दिये होते तो आज मेरी यह दशा न हुई होती। मेरे सर्वनाश के कारण मेरे माता पिता हैं।"

बाल रक्षा ।

प्रायः लड़कों की रक्षा का भार समाज, राष्ट्र और बच्चों के माता पिता पर ही रहता है। वेद का कथन है "मातृमान् पितृ-मान् आचार्यमान पुरुषोवेद ।" माता पिता घर बार का, गुरु आचार्य, धर्म और शिक्षा का कर्तव्य बताते हैं परन्तु अधिक शिक्षित और सौभाग्यशाली बनानेवाला तो राष्ट्र ही है। राष्ट्र और समाज की तरफ से अनेकों प्रकार के कानून इस लिये बनाये जाते हैं कि लड़कों को सभ्यता की शिक्षा दी जाय। जिस देश के लड़कों की सभ्यता, उच्च और मानव जीवन को सुधारने के लिये होती है वह देश शिरोमणि हुआ करता है। किसी कवि ने ठीक ही कहा है—

सच जान लो निज देश के करतार यही हैं।
सच जान लो निज देश के हरतार यही हैं॥

सच जान लो निज देश के भरतार यही हैं।
सच जान लो निज देश के रखवार यही हैं॥

इनके सुधरते देर ना सब काम सुधर जाँय।
इनके बिगड़ते देर ना सब काम बिगर जाँय॥

युवक हो जाने पर देश के प्रत्येक युवक के सम्मुख उसका कर्तव्य अपने आप उपस्थित होता है। अपनी विद्या बल और साहस के आधार पर वे कल्याणकारी कार्यों में लग जाते हैं।

परन्तु आज हमारे देश की स्थिति भिन्न है। माता पिता भिन्न हैं। आज उनकी यह मनोवृत्ति नहीं रही कि उनके बच्चे सदाचारी और संयमी बने। यदि कुछ उद्योग करते हैं तो केवल इतना ही कि उनका लड़का ऊँचे दर्जे की डिगरी प्राप्त कर ले और कोई अधिक वेतन की नौकरी पा जावे। उन्हें उनकी जीवनोपयोगी बातों की ओर ध्यान न देकर केवल अपने स्वार्थ सिद्धि की ही फिक्र रहती है। इसका परिणाम यह होता है कि वे माता पिता की उपेक्षा दृष्टि के कारण यह दुराचारी और लम्पट बन जाते हैं अनेकों प्रकार की बुराइयाँ उनके शरीर में घर कर जाती हैं। युवा अवस्था आते २ अपने शरीर की सार वस्तु वीर्य को पानी की तरह बहाना आरम्भ कर देते हैं और सर्व प्रकार से निर्वीर्य हो नष्ट हो बैठते हैं।

—*—

सदाचार के जानी दुश्मन।

इस बीसवीं शताब्दी में भी मनुष्य समाज प्रायः ऐसे दुर्व्यसनों से घिरा हुआ है जो इसकी उन्नति में बाधा डालते हुए अवनति की ओर खींचे लिये जा रहे हैं। संसार में मैथुन क्रिया की व्यापकता को कभी भी कोई नहीं रोक सकता। कारण यह है कि इससे संसार की सृष्टि का विकास होता है। जिस प्रकार प्रकृति ने अन्य विषयों के लिये नियमादि बनाये हैं

उसी प्रकार मैथुन के लिये भी विधान और नियम रचे हैं। जब लोग नियमों को उचितरूप से पालन कर और उसकी व्यापकता का तत्व समझ कर मैथुन में प्रवृत्त होते हैं तभी विकास और शक्ति प्राप्त होती है और इसी के अन्दर प्रकृति का मूल उद्देश्य छिपा रहता है। अन्यथा इस क्रिया के विरुद्ध जाने से शरीर रोगों का घर बन जाता है। जीवन की सार्थकता नष्ट हो जाती है और मनुष्य असमय में ही मृत्यु का ग्रास बन जाता है। मैथुन से वीर्य का विनाश होता है। शरीर की शक्तियाँ क्षीण होती है। वह मनुष्य संसार में बड़ा भाग्यशाली है जो जीवन पर्यन्त मैथुन से अलग रहकर ब्रह्मचर्य का पालन कर सदाचार युक्त जीवन बिताता है।

मनु भगवान ने अपने धर्मशास्त्र में लिखा है कि मनुष्य जाति का उत्थान केवल सदाचार से ही हो सकता है अन्यथा नहीं। इन्होंने सदाचार के नष्ट करने वाले आठ शत्रु गिनाये हैं। यथाः—

स्मरणं, कीर्तनं, केलि, प्रेक्षणं, गुह्य भाषणम्।
संकल्पोऽध्यवसायश्च, क्रिया निष्पत्ति रेवच॥
एतन्मैथुनमष्टाँगं प्रवदन्ति मनीषिणः।
विपरीतं ब्रह्मचर्य मेतदेवाष्ट लक्षणम्॥

१—स्मरण, २—कीर्तन, ३—केलि, ४—प्रेक्षण, (अव-

लोकन) ५—गुप्तभाषण, ६—संकल्प, ७—अध्यवसाय, ८—क्रियानिष्पत्ति।

१—स्मरण–किसी मित्र अथवा अन्य स्थान में सौन्दर्यमयी स्त्री को देखकर उसके पश्चात् भी उसका स्मरण बारम्बार करना।

२—कीर्तन—स्त्रियों के कामोत्तेजक अंगों का वर्णन तथा उनका यशगान करना और अश्लील गीतों से उनके रूप तथा सौन्दर्य की प्रशंसा करना।

३–केलि—परस्पर क्रीड़ा, हँसना किलकिलाना तथा स्त्रियों में बैठकर मनोविनोद करना।

४—प्रेक्षण—किसी सुन्दर स्त्री या पुरुष को वासना की दृष्टि से देखना।

५—गुप्त भाषण—परस्पर पास बैठकर गुप्त बात करना—उपन्यास और कहानियों के शृंगार युक्त पात्रों के कर्तव्यों पर वाद विवाद करना एकान्त में हँस २ कर बातें करना।

६—संकल्प—चित्रपट अर्थात् सिनेमा अथवा टाकीहाउस की किसी सुन्दरी (अभिनेत्री) या उपन्यास की सुन्दरी नायिकाओं के कुत्सित भावों से पूर्ण चित्रों को देखकर उन्हीं की कल्पना में निरन्तर मग्न रहना।

७—अध्यवसाय—किसी सुन्दरी स्त्री या पुरुष को जो अप्राप्य

है उसकी प्राप्ति के लिये वारम्वार परिश्रम और प्रयत्न करना।

८—क्रिया निष्पत्ति— किसी स्त्री के साथ प्रत्यक्षरूप से सम्भोग करना।

मैथुन के इन आठ प्रकारों में से किसी एक में फँसा हुआ मनुष्य सदाचार को खो बैठता है। फिर जब सदाचार न रहा तो ब्रह्मचर्य कहाँ अक्षुण्ण रह सकता है। यदि मनुष्य इनसे सँभलकर मन की प्रवृत्तियों को संयम की डोरी से कसकर बाँधे तो वह संसार में पूर्ण सदाचारी रह सकता है परन्तु यह सब हो तो कैसे ? इस सदाचार को विनष्ट करने के लिये तो यहाँ ऐसे २ साधन उपस्थित हो रहे हैं कि जिनके कारण हजारों लाखों युवक युवतियाँ इस विनाशकारी ववण्डर के झकोरे में पड़कर पतन के ऐसे गहरे गर्त में गिर रहे हैं कि जहाँ किसी का पता भी नहीं चल रहा है। इसी पतन के कारण आज राष्ट्र की शक्तियाँ छिन्नभिन्न हो रही है। समाज का सारा पौरुष अलग बिलबिला रहा है। जब देश में इस प्रकार पाप का बाजार गर्म है जब समाज में स्त्री पुरुष नवयुवक और युवतियाँ मैथुन की दहकती दावाग्नि में अपने को देखते ही देखते लुटा रहे हैं तो फिर राष्ट्र और समाज का कल्याण किस प्रकार हो सकता है। ऐसा समाज कैसे उन्नति कर सकता है।

एक ओर इस प्रकार मैथुन का विनाशकारी ववण्डर चल

रहा है और दूसरी ओर अप्राकृतिक मैथुन की प्रचण्ड आँधियाँ और भी गजब ढा रही हैं। आज कोई भी ऐसा स्कूल, कालिज विश्वविद्यालय-सभा-सोसाइटी, सार्वजनिक, संस्था, मंदिर, देवालय धर्मशाला, अन्नसत्र-धर्मक्षेत्र, तीर्थ, तीर्थेश, पण्डित-पुजारी-साधु-संत-मठाधीश-और महंत नहीं कि जिनके चक्कर में पड़कर सुकुमार बालक और बालिकायें नष्ट होने से बची हों। सच तो यह है कि न तो किसी में पुरुषत्व ही शेष है और न मनुष्यत्व ही। जब कि पुरुषत्व की सृष्टि करनेवाला और मनुष्यत्व की नींव सुदृढ़ करनेवाला शुक्र (वीर्य) ही लोगों के वदन में नहीं रहा है तो कहाँ से इन दोनों शक्तियों का विकास होगा। इनके विकास का आधार तो केवल वीर्य ही है। यही वीर्य आज पानी की तरह वहाया जा रहा है। एक ओर जहाँ युवक, स्त्री पुरुष मैथुन के द्वारा अपने रज वीर्य का सत्यानाश कर रहे हैं वहीं दूसरी ओर किशोर वय प्राप्त सुकुमार बालक और बालिकायें नित्य गुप्त रीति से अप्राकृतिक मैथुन की अग्नि में अपने को झोंक रहे हैं। फल स्वरूप एक ओर तो मुर्दा और यौवन हीन संतति पैदा हो रही है और दूसरी ओर लोग स्वयं अपना सर्वनाश कर रहे हैं। जब समाज की यह दशा है तो भला इसमें देश और जाति के कल्याण की आशा कैसे की जा सकती है ?

आज समाज का एक एक बच्चा इस अग्नि में झुलस रहा है और प्रत्येक युवक की सारी शक्ति भस्म हो रही है। रास्तों•

सड़कों-पार्कों, मैदानों, वगीचों और उद्यानों में कोई भी ऐसा बालक अथवा युवक नहीं दिखाई देता जिसका चेहरा गुलाब के फूल सा खिल रहा हो और जिसके अन्दर सिंह सपूत की सी शान हो सभी के चेहरे मुर्झाये हुये हैं। दिल जले हुये हैं। मुर्दनी छाई हुई है। आँखें पीली पड़ चुकी हैं और हिमालय की कंदरा में घुसी जा रही हैं। शरीर में साहस और शक्ति का नाम नहीं रहा। इतना सब होते हुये भी विलासता से चिपटे रहने में ही सौभाग्य मानते हैं।

एक ओर शिर के वाल, कंघी की सजावट, हाथ की घड़ी, कामदार और फेशनेवुल जूते, कोट कमीज और टाई आदि की ऊपरी सजावट से इस प्रकार का अपव्यय और जीवन का सर्व-नाश किया जा रहा है और दूसरी ओर विदेशी सभ्यता और आदर्श का अन्धा अनुसरण।

> उपजे हैं नक्काल देश में नकल विदेशों की करते।
> गुण को छोड़ ले रहे अवगुण पापपंक में हैं दहते॥
> मूर्ख, मूर्ख ही रहें न वे विद्या के दर्शन पाते हैं।
> पढ़े लिखे भी पठित—मूर्ख बन मूर्खानन्द कहाते हैं॥
> भाषा भाव भेष हैं भूले क्या अनर्थ है कर डाला।
> चंद दिनों में चौपट कर गई सत्यानाशी मधुशाला॥

आज कोई स्कूल कालिज या विद्यालय नहीं जिसका एक

भी विद्यार्थी ऐसा हो जो विदेशी शिक्षा प्रणाली के चक्कर में फँसकर देशी भाषा-भाव-वेष युक्त दिखाई दे। क्या कोई कह सकता है कि इस प्रकार अपना आदर्श प्राचीन रूप खो कर कोई समाज अथवा देश अपने गौरव को स्थायी रखनेका साहस कर सकता है। ऐसे झुलसे, मृतक और कायर युवकों के सहारे यह आशा करनी व्यर्थ ही नहीं आकाश-कुसुम प्राप्त करने के परिश्रम के समान है। यह तभी हो सकता है कि जब देश में सदाचारयुक्त जीवन बितानेवाले लक्ष्मण सरीखे दृढ़-व्रती, अभिमन्यु जेसे सिंह-सपूत और भीष्म जैसे दृढ़-प्रतिज्ञ पैदा होंगे अथवा अपने बालक और बालिकाओं पर पूर्ण नियन्त्रण रखने और उन्हें यथेष्ट रूप से सदाचारयुक्त जीवन बिताने में तत्पर रहनेवाले माता पिता और आचार्य देश में पैदा होंगे।

ब्रह्मचर्य की महिमा कितनी अधिक है यह सभी जानते हैं। सृष्टि के आरम्भ से लेकर आज तक इसके गुण गाये गये और गाये जा रहे हैं परन्तु जितना भीषण ह्रास ब्रह्मचर्य का आधुनिक काल के २०० वर्षों में हुआ उतना शायद ही कभी हुआ हो। जितनाही अधिक ब्रह्मचर्यका प्रचार किया जाता है और साहित्य तैयार किया जाता है उतना ही अधिक उसके संहार का साधन भी एकत्रित कर दिया जाता है। आज अनेकों प्रकार की ब्रह्म-चर्य सम्बन्धी पुस्तकें बाजार में बिक रही हैं परन्तु जितनी संख्या में असली कोकशास्त्र और रति विलास, काम दर्शन आदि की

पुस्तकें पाठकों का गुप्त मनोरंजन करती है उतना ब्रह्मचय की पुस्तकें नहीं।

एक ब्रह्मचारी के लिये संसार की काया पलट कर देना कोई असम्भव बात नहीं। आज देश में जिधर देखिये उधर असंख्य ब्रह्मचारी दिखाई पड़ रहे हैं और देश रसातल की ओर चला जा रहा है। इसे 'ब्रह्मचर्य की महिमा' कहा जाय अथवा ब्रह्मचारियों की आचार भ्रष्टता ? ओह ! आदर्श का इतना पतन ! क्या इसी आडम्बर और मिथ्याभिमान के कारण कहा जा रहा है कि— "ब्रह्मचर्य ही जीवन है।"

जिन्दगी जिन्दा दिली का नाम है।
मुर्दा दिल खाक जिया करते हैं॥

"ब्रह्मचर्य ही जीवन है" यह सत्य है इसमें लेश मात्र भी संदेह को स्थान नहीं। परन्तु इसके सीधे अर्थ हैं कि प्राचीन समय में रहा हो तो भले रहा हो। अर्वाचीन समय में ब्रह्मचर्य ही व्यभिचार का साधन है। यदि जीवन रखना है तो सदाचार युक्त जीवन विताना पड़ेगा। अन्यथा न तो ब्रह्मचर्य ही रह सकता है और न जीवन ही। यह भी अकाट्य सिद्धान्त है।

देश की चित्रकारी भ्रष्टाचार से भरी है। विज्ञापनबाजों ने अश्लील चित्रों का व्यवहार इतना बढ़ा दिया है कि एक पैसे की दियासलाई की डिब्बी पर भी जानकी बाई गौहरजान आदि की सद्विचार को भ्रष्ट करनेवाली तस्वीरें छापते हैं। सिनेमा

की चलती फिरती और बोलती तसवीरें कुछ ऐसे ढंग पर बनाई गई हैं कि उनसे विलासता का अधिकाधिक प्रचार बड़े वेग के साथ हो रहा है। यह सत्य है कि थियेट्रिकल कम्पनियों का प्रसार कम हो रहा है परन्तु 'टाकी हाउस' इसी कमी की पूर्ति करने के लिये खोले गये हैं। जहाँ अन्य प्रान्तों की नर्तकी सुन्दरियाँ बुला बुला कर नचाई जाती हैं। इन कम्पनियों में प्रायः नवयुवती वेश्यायें इसीलिये रक्खी जाती हैं कि दर्शकों का विशेष आकर्षण हो यही प्रायः प्रत्यक्ष देखा जाता है।

काशी के एक प्रसिद्ध हाईस्कूल के अध्यापक जो अपने को हास्यरस के कवियों की गणना में रखते हैं और बड़े साहित्यसेवी कहलाते हैं एक बार यहाँ तक लिख मारा था कि यदि योगिराज श्री कृष्ण आज होते तो अपनी पटरानी रुक्मिणी को छोड़ देते और मिस सुलोचना से नाता जोड़ते। माखन मिश्री का खाना छोड़ ह्विस्की पिया करते। मधुर स्वरवाली मुरली छोड़ अंग्रेजी बैंड में लिपट जाते और वृन्दावन की वीथी छोड़ टेम्स नदी के किनारे जा खाक छानते। यह है आज कल के कवियों का आदर्श जो अपनी हुलिया न बखान कर आदर्श पुरुषों के सिर दोष मढ़ने पर उतारू होते हैं ऐसे अनार्य्यजुष्ट कार्य सिवा हिन्दुओं के और कोई करने तथा सुनने का साहस कर सकता है।

ऐसे लम्पट, कवि बन बन कर कवि का मान घटाते हैं।
है अचरज की बात तदपि वह साहित्यिक कहलाते हैं॥

सार्वजनिक संस्थाओं में वह उच्च उच्च पद पाते हैं।
कर कुकर्म फिर क्षमा प्रार्थना करते नहीं लजाते हैं॥

क्या विष से पियूष हो पैदा क्षीर नीर से, मधु हाला।
इसी लिये तो नित्य प्रकाशित होती हैं अब मधुशाला॥

गया ज्ञान वैराग्य वीरता शूर वीरता मान गया।
गयी मर्द की शान गया अरमान हाय धन धाम गया॥

गये ग्रंथ सद् वाक्य कलामय सेवा का सम्मान गया।
गयी, सभ्यता दुराचार वश लोक गया कल्याण गया॥

गया, सभी कुछ गया, रहा क्या, सुरा सुराही मय प्याला
चन्द दिनों में चौपट कर गई सत्यानाशी मधुशाला॥

(चटशाला से)

यह माया है टाकी हाउस और सिनेमा घरों की। इनके चित्रों और चरित्रों का दृश्य उन नवयुवकों पर (जो देश की जान हैं) कितना बुरा प्रभाव डालता है यह प्रकट ही है। यदि आप पता लगाना चाहें तो चाहे जब किसी सिनेमा में शाम के प्रथम या दूसरे खेल में जाकर पता लगा लें। अधिकांश में १५ वर्ष से लेकर २०-२५ वर्ष तक के युवक युवतियों ही की भीड़ भरी पावेंगे। किसी धर्मस्थान, जातीय सभा, सुधारक संघ, आदर्श-स्थल, सत् शिक्षा स्थान में देखा जाय तो ४-६ बूढ़े बुढ़ियों के सिवा कोई न दिखाई देगा।

इस भ्रष्ट चित्रकारी ने यहाँ तक ऊँचा स्थान पा लिया है कि देश के मुख्य मंदिरों और देवालयों में भी इन अश्लील चित्रों के लगाने में किसी को आपत्ति नहीं होती। एक ओर नेत्रेन्द्रिय द्वारा समाज के ब्रह्मचर्य का इस प्रकार ह्रास करने का साधन इकट्ठा किया जाता है और दूसरी ओर भ्रष्ट साहित्य का प्रकाशन और प्रचार जारी है। इस साहित्य ने तो एक प्रकार से ब्रह्मचर्य की जड़ में मट्ठा ही डाल रक्खा है और सदाचार को देश के बाहर "बाबूर दरियाय शोर" भेजने का कन्ट्राक्ट ले रक्खा है। लैला मजनू, तोतामैना, शीरींफरहाद, अलिफलैला, कोकशास्त्र आदि अनेकानेक पुस्तकें खुलेआम बाजार में बहुतायत से निरंकुश रूप से बिकती हैं। इसी कारण ब्रह्मचर्य का प्रचार असम्भव हो रहा है। जहाँ ब्रह्मचर्य का पालन नहीं वहाँ सभी प्रकार की दुरावस्थायें उपस्थित हो सकती हैं। इसे कोई रोक नहीं सकता।

किसी दूसरे व्यक्ति का ही नहीं, स्वयं अपने ही शरीर के गुप्त अङ्गों का निरर्थक मर्दन मैथुन की श्रेणी में गिना जाता है परन्तु आज हमारे व्यवहार में इसका किंचित मात्र भी विचार नहीं है। उदाहरण स्वरूप शिक्षित समाज ही को लीजिये। यह लोग शारीरिक हानि पहुँचाने वाली अनेकानेक क्रियाओं का अध्ययन अपने सहयोगियों के संसर्ग से बाल्यावस्था में ही सीखना आरम्भ कर देते हैं।

सदाचार की शिक्षा का प्रबन्ध जब अपनी सामाजिक धार्मिक

राष्ट्रीय और घरेलू संस्थाओं में नहीं है तो अँग्रेजी स्कूलों में कहाँ से हो सकता है। यही कारण है कि नवजवानों की हालत बूढ़ों से भी खराब है। देश का और समाज का गुरुतर भार इनके कन्धों पर होना चाहिये था सो ये स्वयं देश और समाज के लिये भार रूप हो रहे हैं इनकी दशा इस प्रकार दयनीय होने का एक मात्र कारण सदाचार की कमी है।

पहिले तो गाना बजाना और नृत्य आदि एक प्रकार सीमा-बद्ध था परन्तु फोनोग्राफ के रिकार्डों ने इस सीमा को तोड़कर असीम कर दिया है। भले घरों की महिलायें और युवक, बालिकायें बड़े प्रेम से भ्रष्ट गाने श्रवण कर रही हैं और इस प्रकार उनके आचरण अधिकाधिक दूषित होते जा रहे हैं परन्तु किसी भले आदमी को इस दूषित प्रचार का रत्ती भर भी ध्यान नहीं होता। इसी प्रकार अन्य दूषणों का प्रचार और प्रसार भी पर्याप्त रूप से नित्य प्रति होता रहता है।

इन सब बातों के अतिरिक्त गाँजा-भाँग, शराब तम्बाकू-चण्डू अफयून कोकीन आदि न जाने कितने नशों का शिकार आज समाज का मस्तिष्क हो रहा है। भला जिस देश में सदा-चार के जानी दुश्मन अगणित विषय वासनाओं का प्रचार और प्रसार मनुष्य समाज को चारों ओर से घेरे हुये हों क्या वह देश कभी उन्नति कर सकता है?

—*—

त्रिधातु का रूप

वात पित्त कफ यह त्रिधातु हैं। शरीर का छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा अवयव इससे बना है इसलिये इनको धातु कहते हैं। धातु ही शरीर का आधार रूप होता है। इन तीनों के अभाव का अर्थ होता है शरीर का अभाव। जब यह सम से विसम रूप होते हैं तब दोष का रूप लेते हैं और रोग उत्पन्न होता है। कई विद्वान धातु को दोष रूप से और दोष को धातु रूप से कहते हैं। जिस समय धातु नियमित रूप से होता है उस समय इसे "प्रसाद स्थिति" में कहते हैं और जब अनियमित स्थिति में होता है तब इसको 'मल स्थिति' में कहते हैं।

विज्ञान की दृष्टि से शारीरिक क्रिया वात, पित्त और कफ, इस त्रिधातु के ऊपर आधार रखती है। और मानसिक क्रिया सत्व, रज और तम इस त्रिगुण के ऊपर आधार रखती हैं। सम्पूर्ण संसार की उत्पत्ति इन तीनों गुणों से होती है। यही तीनों प्रकृति के गुण हैं। वेद में समस्त संसार को उत्पन्न करने वाली तीन गुणों से युक्त इस प्रकृति का उल्लेख आता है। इसलिये प्रत्येक वस्तु त्रिगुणात्मक कही जाती है। सत्व रज और तम यही तीनों गुण जीवित पुरुष में क्रम से वात पित्त और कफ के रूप में दिखाई देते हैं। जीवित मनुष्य का शरीर वात पित्त और कफ से भरा हुआ कहा जाता है। अगर वायु विशेष हो तो इस प्रकार की प्रकृति वाले को वातल, पित्त

अधिक हो तो पित्तज, और कफ अधिक हो तो श्लेष्मल कहते हैं। प्रत्येक मनुष्य को इनमें कौन सी प्रकृति है यह जानने की आवश्यकता है क्योंकि इसके बाद ही मनुष्य के आरोग्य या रोगी होने पर जाँच करने की आयुर्वेद में आज्ञा है। शरीर के अन्दर की क्रियायें बात, पित्त, और कफ से नियमित होती हैं हम जो खुराक खाते हैं। उससे धातु बनते हैं रस रक्त आदि भी धातु रूप में गिने जाते हैं परन्तु इनको दुष्य शब्द से पुकारते हैं क्योंकि यह बात, पित्त और कफ से दूषित होते हैं।

भोजन का पहले रस बनता है। यह क्रिया अमाशय ग्रहणी और पक्वाशय में होती है। रस बनाने वाले भी बात, पित्त, और कफ हैं। प्राणवायु के रूप में बात भोजन को आमाशय में भेजती है। यहाँ पर कुछ रूपान्तर होने के पीछे इसको ग्रहणी में पहुँचाती है। यहाँ पित्त कफ के द्रवरूप करके इसमें भोजन पचाने की क्रिया होती है । इस प्रकार से इसका रस बनता है इसके बाद बात पित्त कफ की बारम्बार क्रिया होने से रक्त बनता है। फिर रक्त से मांस मांस से मेद, मेद से अस्थि (हड्डियां) बनती हैं। अस्थि से मज्जा और मज्जा से शुक्र बनता है। इस प्रकार सप्त धातु बनते हैं। और भी इसमें से एक धातु बनता है जिसको ओज कहते हैं। यह ओजस सातों धातुओं का सत्व अर्थ सार रूप कहा जाता है। ऊपर लिखे अनुसार यदि शुक्र धातु तक की क्रियायें ठीक प्रकार से न हों तो ओजस धातु को

बहुत नुकसान पहुँचता है। और कई बार ओजस धातु की कमी के कारण जीवन की क्रिया एक दम बन्द हो जाती है। शरीर की इन सातों धातुओं की क्रिया आयुष्य को भी स्थिर करती है।

—**—

ब्रह्मचर्य

किशोरावस्था प्राप्त होते ही शुक्रोदय होता है। शुक्र का अर्थ है वीर्य। जब वीर्य का शुद्ध रूप एकत्रित होता है पकना आरम्भ होता है तो शुक्र का उदय कहा जाता है। शरीर विज्ञान विशारद कहा करते हैं कि वीर्य जन्म के साथ ही आता है इस समय से लेकर वीर्य की परिपक्व अवस्था तक वीर्य की रक्षा ही बालक का ब्रह्मचर्य कहलाता है। यह रक्षा अपने आप बालक नहीं कर सकते। माता पिता का परम कर्तव्य है कि वह अपने सन्तान की रक्षा करें लेकिन ऐसे माता पिता बहुत ही कम मिलेंगे जो अपने कर्तव्यों को पूरा करते हों।

प्रायः देखा जाता है कि लोग बैल और सांड़ तथा कुत्ते तक पालते हैं। उन्हें अच्छा से अच्छा भोजन देते हैं। स्वच्छ हवा और बागों में भ्रमण कराते हैं। नहलाने धुलाने के लिए नौकर रखते हैं कभी भूल से भी किसी को मैथुन नहीं करने देते। उसकी ताकत तेज, और फुर्ती देख कर प्रसन्न होते हैं। घोड़े

पाले जाते हैं उन्हें उम्दा से उम्दा घास और दाना दिया जाता है। सेवा के लिये सदैव साईस तैयार रहता है और ब्रह्मचर्य के पालन के लिये कड़े नियम अर्थात् अगाड़ी पिछाड़ी तक का प्रबन्ध करते हैं परन्तु अपने कलेजे के टुकड़े होनहार बालक बालिकाओं की ओर ध्यान देने का इन्हें कभी भी खयाल नहीं होता। जिसका फल यह होता है कि सन्तान दुराचार की ओर प्रवृत्त होती है और गुप्त व्यभिचार द्वारा अपना सर्वनाश कर लेती हैं और असमय में ही काल के गाल में समा जाती है। पिता माता के देखते २ अनेकों पुत्र रोज ही मरते देखे जाते हैं और लोग बैठे अपनी तकदीर को रोया करते हैं।

व्याकरणाचार्यों का कथन है कि पुत्र शब्द पु + त्र के योग से बनता है। पु नाम नर्क का है और त्र का अर्थ तारने वाला है। जो अपने पित्रों को नर्क से उबार ले वही पुत्र है। प्रायः देखा जाता है कि पिता माता और बड़े पूर्वज बैठे ही रह जाते हैं और पुत्र अल्पायु में ही चल बसते हैं। यह सब कर्तव्य के फल हैं। न तो आज कल पुत्र प्राप्ति की इच्छा से ही पुत्रों की उत्पत्ति ही होती है और न माता पिता ही अपने को वास्तविक माता पिता कहलाने के अधिकारी होते हैं। इसके लिए कटु बैन अथवा अप्रिय सत्य यही कहा जा सकता है कि स्त्रियों के लिये पुरुष कामदेव की साक्षात् मूर्ति और पुरुषों के लिए स्त्रियां काम क्रीड़ा की जलन बुझाने के लिए जलती हुई भट्ठियां हैं। दोनों के

व्यभिचार के फल स्वरूप जब रज और वीर्य का सम्मिश्रण होता है तो सन्तान उत्पन्न होना स्वाभाविक है। यदि नियम और विधि विधान के अनुसार गर्भाधान आदि संस्कार किये जायँ तो पुत्र वास्तविक पुत्र हो और माता पिता वास्तविक माता पिता। आज सारी क्रिया अनियमित होने के कारण ही इस प्रकार सत्यानाश हो रहा है कि न तो माता पिता ही सन्तान के प्रति उत्तरदायी होते हैं और न सन्तान माता पिता ही के लिये उत्तरदायी हैं। इस दशा में वह गृहस्थ परिवार समाज अथवा देश यदि गृह कलह द्वेष पापाचार व्यभिचार आदि दुराचारों का केन्द्र बन जाय तो क्या आश्चर्य है ?

ब्रह्मचर्य एक ऐसा विषय है कि इसका महत्व युवकों को विद्यारम्भ संस्कार के समय से बताया जाता था और उसकी रक्षा करने के लिये अनेकों नियम भी बताये जाते थे। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने के पहिले ब्रह्मचर्य का पालन अनिवार्य हुआ करता था उस समय ब्रह्मचारी को जो कुछ पढ़ाया जाता था उसमें सबसे अधिक प्रभाव ब्रह्मचर्य्य का ही होता था। ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये सबसे आवश्यक विषय है सत्संगति। मनुष्य का स्वभाव प्रकृति की कृपा से ही ऐसा होता है कि वह अपने पास के अन्य मनुष्य के कार्यों और दिनचर्या का अनुकरण करता है। बालकों की प्रकृति साधारणतः शान्त होती है इस समय इन पर जैसी संगति और संस्कार के प्रभाव डाले

जावेंगे वही जीवन भर उसके हृदय में बास करेंगे। सङ्गति और आचरण यदि अच्छे हैं तो अच्छा प्रभाव पड़ेगा अन्यथा सिवा विगाड़ के और कोई मार्ग नहीं है। ऐसे प्रभाव बिल्कुल अनजान में ही हुआ करते हैं। इसलिये अनाचार और संसर्ग दोष को एक प्रकार का कराल विष ही जानना चाहिये। यह विष समाज रूपी शरीर में प्रवेश करते ही इस भयंकर रूप से बढ़ना आरम्भ करता है कि कुछ ठिकाना नहीं। यही कारण है कि अधिकतर विद्वान शिक्षा की अपेक्षा सत्संग और सदाचार को ही विशेष महत्व देते हैं। सत्संग और सदाचार का प्रत्यक्ष फल जीवन की सभी अवस्था और परिस्थिति में दिखाई दिया करता है।

सत्संगति ही सदाचार शिक्षा की सबसे उत्तम और अनुपम चटशाला (पाठशाला) है और सज्जनों का चरित्र ही सबसे उत्तम नैतिक शास्त्र है। जिस सत्संगति से सदाचार की अनुपम शिक्षा मिलती है वह सदाचार ही मनुष्य जीवन का सब से अधिक उपयोगी और महत्व पूर्ण अंग है। मनुष्य जीवन की शोभा श्रेष्ठता और महत्ता सदाचार ही से होती है। वास्तविक बात तो यह है कि सदाचार ही संसार की व्यवस्था का व्यापक नियम है। त्रैलोक्य की सम्पदा और सर्व सुखों की खान सदाचार ही है। जो व्यक्ति अधिक विद्वान और बुद्धिमान तथा सम्पतिशाली है वह अपनी विद्या बुद्धि और सम्पति का अच्छा उपयोग कर सकता है और बुरा भी।

परन्तु किसी सदाचारी व्यक्ति से समाज के कल्याण तथा उपकार के सिवा हानि अपकार अथवा दुराचरण की कभी स्वप्न में भी आशा नहीं रक्खी जा सकती।

मानव शरीर के अन्दर एक अद्‌भुत शक्ति का निवास रहता है जिससे मनुष्य का प्राण-आकृति-शरीर-आँखें एक अद्‌भुत ज्योति से जगमगाया करती है। इसको शरीर शास्त्र के पंडितों ने "ओज" नाम से पुकारा है। इसी ओज के विषय में एक प्रसिद्ध जर्मन डाक्टर की सम्मति है कि मानव शरीर में वीर्य से बढ़ कर सर्वोत्तम और गुणकारण एक ऐसा पदार्थ पाया जाता है जो वीर्य से तैयार होता है। जिस मनुष्य के शरीर का वीर्य शुद्ध और पवित्र होगा उसमें ओज नाम का अत्यन्त गुणकारी पदार्थ भी पाया जाता है। अतएव प्रत्येक व्यक्ति को अपने ओज की रक्षा करके वीर्य की रक्षा करना आवश्यक है। ओज से मानव शरीर में शक्ति की वृद्धि होती है चैतन्यता और मस्तिष्क में बल उत्पन्न होता है। आयु वृद्धि में सहायता मिलती है हमारे प्राचीन पंडितों का कथन है कि--

ओजोऽस्तु तेजो धातूनां शुक्रान्तानां परं स्मृतं।
यन्नाशे नियतं नाशो यस्मिन्तिष्ठति जीवनाम्।

ओज—रस से लेकर वीर्य तक धातुओं का सार रूप तेज है जिसके नष्ट होने पर कोई जीवित नहीं रह सकता। ओज वीर्य

का सार भाग है। जिस प्रकार वीर्य समस्त शरीर में व्याप्त है उसी प्रकार ओज भी समस्त शरीर में व्याप्त है।

प्रत्येक प्राणी के लिये प्रकृत्ति की ओर से चैतन्यता पर्याप्त रूप से मिली है उसके अन्दर विचार करने की शक्तियां यथेष्ट रूप में है। इतना होते हुये भी यदि वह यह नहीं समझता कि उसकी जीवन रक्षा किस प्रकार हो तो इसमें किसी का क्या दोष ? ऐसा मनुष्य अपना विनाश अपने आप करता है। अपने लिये मौत का फंदा अपने आप तैयार करता है। अपने गिरने के लिये गढ़ा वह अपने आप खोदा करता है जिसमें गिर कर वह स्वयं तो चकनाचूर होता ही है साथ में अपने बाल बच्चों को भी ले जाता है। यदि वह तनिक भी विचार से काम करें तो उसे स्पष्ट विदित हो जावेगा कि शरीर रूपी किले की नींव इस वीर्य पर ही अवलम्बित है और इसी की महत्ता सम्पूर्ण अंगों में विद्युत शक्ति की भाँति दौड़ रही है। अतएव वीर्य और ओज की रक्षा के लिये अवश्य प्रयत्नशील रहना चाहिए।

प्रायः देखा जाता है लोग इन बातों की ओर ध्यान नहीं देते और कुवासनाओं की ओर सरपट दौड़े चले जा रहे हैं और अपना वीर्य नष्ट कर स्वयं नष्ट भ्रष्ट हो रहे है। "ब्रह्मचर्य ही जीवन है वीर्य नाशही मृत्यु है" इस प्रकार के आदर्श वाक्य कमरे में लटकते ही रह जाते है और वहीं सब कुछ हुआ करता है।

सदाचार से लाभ

१—सदाचार से वीर्य रक्षा होती है। वीर्य रक्षा से देश के महान कार्य सरल रूप से हुआ करते हैं। कठिन से कठिन कार्य भी चुटकी बजाते तय हो जाते हैं।

२—वीर्य रक्षा से ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचर्य से तेज, शक्ति, ओज स्फूर्ति और आत्मज्ञान प्राप्त होता है।

३—राष्ट्र समाज और धर्म की सेवा करने वाले व्यक्ति का प्रथम कर्तव्य है कि वह ब्रह्मचर्य धारण कर वीर्य रक्षा करे। ब्रह्मचर्य के द्वारा सेवा व्रत का भाव हृदय में उत्पन्न होता है अन्यथा नहीं।

४—वीर्य रक्षा से हृदय की पवित्रता होती है और इस प्रकार की पवित्रता से चित्त सदैव प्रसन्न रहता है कभी अनिष्ट की सम्भावना नहीं होती।

५—ब्रह्मचर्य से जीवन शक्ति का विकास और स्फूर्ति की जागृति होती हैं इससे हृदय में दृढ़ता आती है और स्वकर्तव्य का ज्ञान होता है।

६—वीर्य रक्षा से मस्तिष्क शांत, स्थिर, और विचारवान होवा है।

७—ब्रह्मचर्य ही मनुष्य के शरीर में सौन्दर्य और साहस का संचार करता है और ज्ञानेन्द्रियों की शक्तियां बढ़ाता है।

८—सदाचार से ही कुवासनाओं का नाश और सद्भावनाओं का उदय होता है। चित्त सदैव प्रसन्न रहता है।

९—वीर्य की रक्षा करने वाला पुरुष अधिक कालतक बिना व्याधियों के जीवित रहता है और सुन्दर संतान उत्पन्न करने की शक्ति रखता है।

१०—वीर्य ही शरीर का राजा है। राजा के हत होते ही शरीर की सारी शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं और राज्य नष्ट हो जाता है।

सच्चरित्र और सुसंग

एक विचार शील और मनन शील महात्मा का कथन है कि "यदि तुमने धन को खो दिया तो कुछ नहीं खोया। यदि स्वास्थ्य खोया तो कुछ खो दिया, परन्तु यदि अपना सद् आचरण खोकर दुराचारण में प्रवृत्त हुये तो समझो सर्वस्व खो दिया।"

प्रत्येक मनुष्य की पहिचान उसके चरित्र से हुआ करती है। मनुष्यता की पहिचान के लिये धन बल, जन बल, की आवश्यकता नहीं होती। यदि निर्धन, धनावान हो जाय और धनवान निर्धन हो जाय, निर्बल व्यक्ति शक्ति प्राप्त करके शक्तिशाली हो जाय अथवा शक्तिशाली व्यक्ति अपनी शक्ति गवाँ कर निस्तेज

हो जाय तो इससे मनुष्यता में कोई अन्तर नहीं पड़ता । धन और ऐश्वर्य तो वाह्य वस्तुयें होती हैं। बल का सम्बन्ध शरीर से होता है परन्तु चरित्र का सम्बन्ध अपनी अन्तरात्मा से है। चरित्रहीन व्यक्ति चाहे कितना ऐश्वर्य सम्पन्न क्यों न हो, कितना ही अधिक शक्तिशाली क्यों न हो सदाचारी संसारमें वह "कौड़ी का तीन" भी मँहगा है। प्रकृति ने मनुष्य का जीवन चरित्रमय ही निर्माण किया है। इसके अन्दर जो चैतन्य शक्ति रहती है वह उससे कुछ न कुछ चरित्र करने के लिये वाध्य करती रहती है। यदि चरित्र अच्छा है तो शुभ है अन्यथा दुष्परिणाम अवश्यम्भावी है। यदि चरित्र बनाने पर ध्यान न दिया जाय हो दुष्ट वातावरण का प्रभाव मनुष्य पर अवश्य पड़ता है। इससे यह वात स्पष्ट हो जाती है कि मानव स्वभाव पतन की ओर अधिक झुका रहता है यदि उसे उन्नति की ओर न लाया जाय तो एक स्थान पर वह स्थिर न रह कर पतन के गहरे गर्त में गिर जाता है। अतएव मनुष्य को अपना मनुष्यत्व स्थिर रखने के लिये उन्नति शील होना ही पड़ता है और अपना व्यक्तित्व स्थिर रखना पड़ता है कि जिसके द्वारा वह दूसरों पर प्रभाव जमा सके।

मनुष्य का व्यक्तित्व ही उसका चरित्र हुआ करता है। व्यक्तित्व नाश का अर्थ है चरित्र नाश जहाँ एक पल भी भूल की, बस व्यक्तित्व नाश हुआ और चरित्र चौपट हो गया।

अतः चरित्र के संगठित करने में सदैव दत्तचित्त रहना चाहिये।

प्रायः देखा जाता है किसी व्यक्ति को जब कोई व्यक्ति उच्च शिक्षा देने लगता है तो उसे वह शिक्षा विष के समान खराब मालूम होती है और क्रोधावेश में वह कह बैठता है "अच्छा हम नष्ट भ्रष्ट होते हैं तो होने दो इसमें तुम्हारे बाप का क्या बिगड़ता है।" इस प्रकार का कथन व्यर्थ है। अपने चरित्र को न बनाने वाला अपना तो नाश कर ही लेता है साथ ही अपने साथियों का भी अहित करता हुआ अकाल मृत्यु को प्राप्त हो प्रायश्चित करता है।

बालक अनजान हुआ करते हैं उन्हें इस बात का पता नहीं होता कि किस व्यक्ति का साथ अच्छा है किसका बुरा। स्कूलों में प्रायः इस प्रकार के अनेकों मित्रों से उनका मेल मिलाप हुआ करता है जिनसे वे परस्पर हँसते खेलते और नाना प्रकार के आमोद प्रमोद की बातें किया करते हैं। इस दशा में प्रायः देखा जाता है कि उन छोटे २ विद्यार्थियों में काम की अग्नि भभक उठती है। कालेज और ऊँचे २ विद्यालयों में तो यह बात निश्चित सी है। यह बात अवश्य है कि वह लोग उस समय काम विज्ञान से अनभिज्ञ होते हैं परन्तु जिस प्रकृति की अनुपम देन कामेन्द्रियाँ हैं उसके द्वारा इन्हें मूक संकेत हो ही जाता है फल स्वरूप वे आपस में अप्राकृतिक ढंग पर इन्द्रियों

को उत्तेजन देना आरम्भ कर देते हैं और मैथुन में प्रवृत्त हो जाते हैं। परिणाम यह होता है कि उनकी आदत कुवासनाओं की ओर घूम जाती है और अनेकों प्रकार के दोष दुर्गुण और काम वासनाओं की भावनायें भर जाती हैं। आज प्रायः बहु-संख्यक बालक स्कूलों में ऐसे पाये जाते हैं जो अपनी इस कुवृत्ति के कारण अपने ही हाथों अपना सर्वनाश कर लेते हैं। ऐसे बालक एकान्तसेवी विषयी शौकीन तथा उच्छृङ्खल हुआ करते हैं। पढ़ने में तो उनका चित्त लगता ही नहीं। मुँह की कान्ति और सम्पूर्ण साहस खो बैठते हैं।

ऐसे बालक कभी भी अपनी यह कुभावनायें अपने माता पिता पर नहीं प्रकट होने देते। घर के लोगों और स्कूल के अध्यापकों की दृष्टि से बचते रहने का प्रयत्न किया करते हैं। ऐसी दशा में प्रत्येक माता पिता का कर्त्तव्य है कि शीघ्र ही वह इनकी गुप्त प्रवृत्तियों का पता लगावें। यदि तनिक भी सतर्क होकर लुक छिप कर उनके चाल चलन का पता लगावें अथवा उनके मिलने वाले सहयोगियों पर ध्यान देवें तो सारे रहस्य खुल जावें और उनके बालक इस प्रकार की पाप वासनाओं की धधकती भट्ठी में झुलस कर प्राण त्यागने से बचे रह सकें। संसार में कुसंगति ही अवगुणों की खान है। कुसंग से अनेकों प्रकार की बुराइयां इच्छा न रहते हुए भी मनुष्य सीख लेता है परन्तु सुसंगति से इच्छा रखते हुए भी किसी भी अच्छी

शिक्षा को प्राप्त करने में अधिक समय बिता देता है। जिसकी प्रकृति उत्तम आचरण शुद्ध और बुद्धि विवेकमय होती है उसी मनुष्य के लिये सुसंग और कुसंग कुछ नहीं कर सकता।

दुष्टों की संगति में रह कर जीवित रहने की अपेक्षा यदि मनुष्य मर जावे तो अच्छा। जो मनुष्य इस रहस्य को समझ लेता है वही सदाचार का व्रत ले सकता है। अतः जिन माता पिता ने अपने बालकों को जन्म देकर पालन पोषण किया है उनका यह प्रथम कर्त्तव्य है कि इन्हें कुसंगति से हटा कर सुसंगति अथवा बुद्धिमान सभ्य पुरुषों के यहां सदैव जाने के लिए उत्साहित किया करें।

सर्व तीर्थों में श्रेष्ठ सत्संग है। सत्सङ्ग सबसे उच्च और उत्कृष्ट पद है अतएव सब विकार त्याग कर कायिक मानसिक वाचिक रूप से सत्पुरुषों का सत्संग करना चाहिये।

विद्यार्थियों पर अगणित पुस्तकों का भीषण भार लादने तथा उनके माता पिता पर हजारों रुपया खर्च करने का जुर्माना रूप वसूल करने के लिए फीस रूपी टैक्स लगा रखने में आज कल के स्कूलों और कालेजों के प्रबन्धक बड़े प्रवीण हैं परन्तु यदि तलाश की जाय कि देश में कितने स्कूल ऐसे हैं जो दिन में कम से कम एक घन्टा भी सदाचार और चरित्र सुधारने की शिक्षा देते हैं या कोर्स में कोई पाठ ऐसा पढ़ाया जाता है अथवा खेल कूद के लिए पारितोषिक प्रमाणपत्र पदक आदि दिये जाते हैं

तो शून्य को भी शर्म से गर्दन झुका लेनी पड़ेगी।

देश में कुछ स्कूल ऐसे हैं जो ईसाई मिशन मुसलिम अथवा आर्य सामाजिक संस्थाओं द्वारा खुले हैं इनमें बाइबिल कुरान तथा सत्यार्थ प्रकाश और वैदिक सन्ध्या पढ़ाने का नियम है परन्तु चरित्र सुधारने के लिये इनके यहां भी कोई नियम सिद्धान्त और प्रणाली नहीं है। ऋषि दयानन्द सरस्वती अपने सत्यार्थ प्रकाश में लिख गये है कि लड़कों के स्कूल (पाठशाला) से लड़कियों के स्कूल में एक योजन (४ कोस) का अन्तर होना चाहिये लड़कियों की पाठशाला में ५ वर्ष से अधिक आयु का बालक भी न जाना चाहिये परन्तु यहां सह-शिक्षा ही का प्रचार किया जाता है। क्या कोई कह सकता है कि इसप्रकार की शिक्षा से दूषित वातावरण उत्पन्न होकर अनेक प्रकार के कुकर्म इन आधुनिक स्कूलों में नहीं हो रहे हैं?

स्कूलों में जो धार्मिक पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं वह केवल इस लिए पढ़ाई जाती हैं कि कोर्स में नियत कर दी गई हैं यह केवल पढ़ाने के लिए पढ़ाई जाती है शिक्षा के लिए नहीं। स्कूल के मास्टर और कालेज के प्रोफेसर जब नौकरी पर रक्खे जाते हैं तो उनसे प्रश्न होता है? आपकी शिक्षा कहां तक है कौन २ सार्टीफिकेट हैं? किस विद्यालय के ग्रेजुयट हैं? यदि उनसे सब प्रश्नों के साथ एक प्रश्न कर दिया जाय कि आप कितने सच्चरित्र हैं और आपको सदाचार की शिक्षा कहां मिली, आप सदाचार

का पाठ किस दर्जे तक पढ़ा सकते हैं? तो सारे सार्टीफिकेट डिप्लोमा हवा में मिल जावें और हें! हें! करने के सिवा कुछ भी बोल न निकले। फिर भलाः—

सन्तरो ही चोर हो तो कौन रखवाज़ी करे।
चमन की क्या हो दशा जब माली ही पामाली करे॥

स्कूल के बोर्डिङ्ग हाउस अथवा छात्रावास जहाँ प्रायः नवयुवक विद्यार्थी ही निवास करते हैं इन्हीं मास्टरों की छत्रछाया में रहते हैं। ऐसे मास्टरों को इस बात से क्या मतलब है कि किस विद्यार्थी के पास स्कूल कोर्स के सिवा कैसा कैसा साहित्य है। किसके कमरे में रात दिन किस प्रकार का व्यवहार होता है। महीने के दो दिन इनके निरीक्षण के निश्चित होते हैं उस दिन समस्त विद्यार्थी अपना अपना साज सामान लैस कर, निरीक्षक को प्रदर्शिनी की भांति दिखला देते हैं। मतलब यह है कि अब महीने के शेष दिन उन्हें स्वेच्छाचार से बिताने का कन्ट्रान्ट मिल गया। बस फिर क्या है शाम हुई नहीं अधिकतर छात्र सिनेमा में पहुँचे। कुछ सैर सपाटे को चल पड़े। जो शेष रह गये वह आपस में ही तिकड़म करने लग गये। निरीक्षक महाशय के पास पहिले तो इस समाचार का पहुंचना ही कठिन है यदि किसी प्रकार उन्हें इसका समाचार मिल भी जाय तो उनकी हिम्मत नहीं कि इस कार्य में कुछ भी दखल दे सकें। जो निरीक्षक जरा अपनी शक्ति की आजमाइश

पर उतर आते हैं उन्हें विद्यार्थी मण्डल खूब अच्छी प्रकार पाठ पढ़ाने के लिये तैयार हो जाता है। बस यहीं सारा गुड़ गोबर हो जाता है। अधिकतर छात्रावास इसी प्रकार की बुराइयों के स्थान हो गये हैं।

कौन कह सकता है कि इस शैतान मण्डल के चक्कर में फँसाने के लिये और अपने बालकों का जीवन चौपट करने के लिए उनके माता पिता दोषी नहीं। बेचारे बालकों के चालचलन की जांच पड़ताल की जाती है। सार्टीफिकेट में इसके लिए एक खाना अलग ही छोड़ा जाता है परन्तु किस स्कूल, कालेज या विद्यालय के कितने अध्यापक सच्चरित्र हैं अथवा इस वर्ष में कितने अध्यापकों का चरित्र दूषित हुआ इसकी जांच पड़ताल के लिए कोई प्रबन्ध नहीं।

बड़े खेद की बात है कि जो माता पिता और संरक्षक अपने बालकों की शिक्षा में अपना सर्वस्व लुटा देते हैं वे ही उनके सदाचरण पर ध्यान नहीं देते। यदि कोई दूसरा व्यक्ति इसकी आलोचना और टीका करता है वो सुनना तो दूर रहा उलटे शत्रुता करने पर तुल जाते हैं। ऐसी दशा में बेचारे बालकों को ही अपना कर्त्तव्य ढूँढ़ने के लिये बाध्य होना पड़ता है।

अच्छा आचरण वही है जिसके द्वारा अपना कल्याण तो होवे परन्तु दूसरे का भी कल्याण होवे। जिस आचरण के द्वारा कवल अपना ही भला हो और दूसरे की हानि हो उसे दुराचरण

कहते हैं। उस आचरण को कौन अच्छा कहेगा जो एक ही समय में एक ही स्थान पर एक को लाभप्रद और दूसरे को हानिप्रद हो। एक सदाचारी के लिए धैर्य, क्षमा, मन का संयम चोरी का त्याग, पवित्रता, इन्द्रिय संयम, बुद्धिमत्ता, ज्ञान संचय, सत्यता और क्रोधका त्याग बहुत ही आवश्यक है। सुन्दर चरित्र और उत्तम प्रकृति प्रत्यक्ष फल देते हैं। संसार में कोई ऐसा उदाहरण नहीं मिलता जिससे दुश्चरित्रता का परिणाम हितकर और शान्तिदायी हुआ हो। आत्मा-परमात्मा और संसार को सच्चरित्र व्यक्ति ही समझ सकता है परन्तु इस प्रकार का चरित्र कुछ दिन या महीनेमें नहीं बना करता। मक्खन अथवा घी प्राप्त करने की इच्छा रखने को समय और उचित प्रबन्ध की जिस प्रकार अत्यन्त आवश्यकता हुआ करती है लेकिन उसे नष्ट करने के लिये केवल थोड़ी सी खटाई ही पर्याप्त है। उसी प्रकार अच्छा आचरण या शुद्ध चरित्र न तो एक दिन में बन ही सकता है और न अनायास प्राप्त किया जा सकता है। उत्तम विचारों के कारण कर्म के सुधरने से चित्त शान्त होता है। चित्त के शान्त होने से नाना प्रकार की कुवासनायें नष्ट होती हैं और कुवासनाओं से पिण्ड छूटते ही आचरण ठीक हो जाता है और मनुष्य सदाचारी बन जाता है।

किसी मनुष्य का बिगड़ा हुआ चरित्र सुधारना कठिन अवश्य है परन्तु असम्भव कदापि नहीं है। यदि वह अपना

बिगड़ा चरित्र सुधारने पर तुल जाय तो उसके सुधार का रास्ता सुगम हो जाता है। चाहे कितनी ही बुरी प्रकृति का मनुष्य क्यों न हो उसे कभी भी निराश न होना चाहिये। बड़ी से बड़ी शक्ति वाला जानवर भी यदि खाना न पा सके तो चन्द दिनों में ही कमजोर निकम्मा होकर जमीन में बैठ जायगा। इस भांति यदि बुरी से बुरी चाहे किसी भी प्रकृति का व्यक्ति हो यदि उसे उस प्रकृति का साधन न जुटाया गया बल्कि उसके विरुद्ध सुधारक सामग्री उपस्थित की गई तो उसकी बुरी भावनायें, आकांक्षायें, और इच्छायें अवश्य मर जावेंगी।

इस प्रकार की क्रिया साधन में मन को अपने वश में करना ही सबसे पहिला कर्तव्य है जिस समय मन में बुरे विचार आवें तुरन्त उधर से चित्त को फिरा देना चाहिये और दृढ़ संकल्प कर लेना चाहिए कि इस कुमार्ग पर हरगिज न जाऊंगा। इस दुष्ट स्वभाव का दास न बनूँगा। जिस प्रकार कठिनाई के समय सब लोग घबराते हैं उसी प्रकार चंचल मन भी बन्धन में पड़ने से घबराता है और दृढ़ प्रतिज्ञा की डोरी से छुड़ा कर भागने की कोशिश करता है। जो लोग इस प्रकार के कष्ट झेल कर मन को काबू में रखनेका प्रयत्न करते हैं वह आचरण सुधारने में अवश्य सफल होते हैं।

खाली दिमाग शैतान का घर हुआ करता है। जिस प्रकार चरित्र सुधार के लिए एकान्त सेवन हानिप्रद है उसी प्रकार बेकार

बैठना भी कष्ट बढ़ाने वाला है। बेकार मनुष्य बदकार हो जाता है और बदकार मनुष्य सारे बुरे कार्य करने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है। बुद्धिमानों का समय काव्य और शास्त्र के आनन्द में और मूर्खों का दुर्व्यसनों और झगड़े फसाद में व्यतीत हुआ करता है। इससे यह प्रकट हुआ कि बेकार रहना और कुसङ्ग केवल बुरा ही नहीं है अपितु चरित्र को बिगाड़ने के लिए मुख्य साधन है।

ऊँचे आदर्श गिरे हुए व्यक्ति को सच्चरित्र बनाने में समर्थ होते हैं। कर्तव्य करके दिखलाने और सिखलाने में अधिक समय की आवश्यकता होती है और उसका प्रभाव भी कम होता है। परन्तु दृष्टान्त का प्रभाव तत्क्षण और बहुत अच्छा हुआ करता है। जो बात बार बार के समझाने पर भी समझ में न आती हो उसके लिए उचित दृष्टान्त द्वारा थोड़े परिश्रम से कार्य पूरा हो जाता है। जो व्यक्ति ऊँचे चढ़ने का प्रयत्न नहीं करता वह सदैव नीचे ही पड़ा रहता है। जो पवित्रता नहीं चाहता वह सदा ही मैला कुचैला रहा करता है। जिस मनुष्य ने अपना आदर्श ऊँचा नहीं बनाया वह कभी भी ऊपर नहीं उठ सकता। उच्च आदर्श और सच्चे दृष्टान्त सदैव चरित्र सुधारने में सहायक होते हैं।

सच्चरित्र बनने के लिए सबसे अच्छा और उत्तम उपाय ईश्वर भक्ति अर्थात् आस्तिकता है। आधुनिक काल में ईश्वर भक्ति के जितने नियम और ढङ्ग बताये जाते अथवा बर्ते जाते हैं

वे वास्तव में सब गलत और मिथ्या हैं। इस प्रकार की पद्धति और प्रणाली से न तो आज तक कोई ईश्वर भक्त हो सका न होने की सम्भावना ही है। भले ही अपने मुंह मियां मिट्ठू बन कर अपनी झूठी शान दिखाया करें। असली आस्तिकता की प्राप्ति के उपाय यद्यपि आर्य काल से प्रचलित हैं, परन्तु स्वार्थता और धूर्ततावश लोगोंने जो दूकानदारी प्रचलित कर ली है और उसकी आड़ में जो भीषण अनाचार और व्यभिचार फैलाया है कि आज लोगों को 'ईश्वर और धर्म केवल ढोंग है' विषय में पुस्तक प्रकाशित करने तथा ईश्वर के अस्तित्व के विषय में वादा-विवाद करने के लिए विवश किया है। जिसका फल यह हुआ है कि आज उद्दण्डता, उच्छृंखलता और अनाचार का बोलबाला है। ईश्वर दयालु, परोपकारी, सर्वशक्तिमान, पतित पावन, भक्तवत्सल, न्यायकारी और अनेकों नाम से पुकारा जाता है। ईश्वर को ईश्वर मानने वाले व्यक्ति आज उसे अपने मन का खिलौना समझ बैठे हैं और जैसा चाहते हैं वैसा उससे नाच नचाया करते हैं। यदि आज की प्रचलित सारी परिपाटी अथवा प्रणाली उलट दी जाय तो वास्तविक सच्ची प्रणाली प्रचलित हो जावे और लोगों को भूला हुआ सन्मार्ग प्राप्त हो जावे। कुछ समय पूर्व स्वार्थी और धूर्तों ने अपनी इच्छा पूर्ति के लिये प्रचलित सभी रीति रस्म चाल व्यवहार को उलट कर अधोमुख कर दिया था उसी उलटी हुई पद्धति को उलट देने से सीधा रास्ता दिखाई

दे जाता है और कार्य के आरम्भ होते ही फिर प्राचीन गौरव, यश और हर्षानन्द के प्राप्त होने में देर नहीं लग सकती।

यथा नामः तथा गुणः के अनुसार ईश्वर के जितने नाम है वही उसके गुण है। यदि आज लोग केवल नाम रटन्त की पद्धति छोड़ कर गुणोंपर विचार करें और उसके अनुसार अपने को बनाना आरम्भ करें तो थोड़े ही समय में वह ईश्वर का साक्षात् कर सकते हैं इसमें कुछ भी संशय नहीं। उदाहरण के लिये उसके "दयालुता" गुण को लीजिये। आज कल लोग इसका अर्थ यह करते हैं कि ईश्वर दयालु है इसलिये चोर बदमाश नंगे लुच्चे लफंगे व्यभिचारी शराबी अनचारी दुखी दरिद्री जाहिल धनी निर्धनी आदि सबपर दया करना चाहिये। यदि कोई चोर आपके घर पर चोरी करने घुसे और आप ईश्वर को मानते हैं तो उचित है कि उस बेचारे चोर के (चोरी करने के) कार्य में बाधक न होवें उसे चोरी कर ले जाने दीजिये। क्योंकि ईश्वर ने दया करके उस चोर को फायदा उठाने के लिये आपके घर भेजा है। इस समय यदि आप उस चोर के कार्य में बाधक होंगे तो निश्चय ही ईश्वर की दयालुता का विरोध करने के लिये आप खड़े हो रहे हैं। तब आप कैसे कह सकते हैं कि हम ईश्वर की आज्ञा मानते हैं। ईश्वर की आज्ञा मानने वाला चोर भी है आप भी हैं। ईश्वर आप पर भी दयालु है और चोर पर भी। ईश्वर चोर को आपकी सम्पति चुरा कर फायदा उठाने के लिये

दयालु बन जाता है परंतु आप की सम्पत्ति का हरण कराकर हानि क्यों पहुँचाता है? क्या यही ईश्वर की दयालुता है? एक ही स्थान पर दो अर्थ क्यों अनर्थ पैदा कर रहे हैं।

यदि आप ध्यान से विचार करेंगे तो ज्ञात हो जायगा कि इस प्रकार के सारे अर्थ उल्टे और अनर्थकारी है। वास्तव में ईश्वर दयालु है उसकी दयालुता का अर्थ समझने के लिये जरा बुद्धि को विचार सागर की ओर ले चलिये। यदि चोर घर में घुसे और आप उसे पकड़ सकें तो उचित है कि उसका पूर्ण परिचय प्राप्त करिये। उसकी आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति ज्ञात कर उसको इस कार्य से हटाने की इच्छा रखते हुये साम दाम दण्ड भेद से समझा बुझा कर सीधे मार्ग पर ले आइये। यदि उसमें अभी चोरी की बुरी लत अधिक नहीं समाई है तो निश्चय ही वह चोरी करने की आदत छोड़ इससे दूर होने का प्रयत्न करेगा उसका जीवन सुधर जायगा और कल्याण होगा। यदि वह पक्का चोर हो चुका है तब भी उसे उचित शिक्षा देने के पश्चात् उसे अपनी करनी का फल भोगने के लिये राजकर्मचारियों को सौंप सजा अवश्य दिलावे। सजा भुगत कर आने पर सब लोग मिल कर पुनः सहायता देवें और ठीक मार्ग बतलावे और उसकी उचित आवश्यकतायें पूर्ण करने का भरसक प्रयत्न करें। इस दशा में उसका अवश्य कल्याण होगा और वह अच्छा नागरिक बन सकेगा। आपकी इस कृपा से

चोर का चरित्र सुधर जायगा। इसप्रकार ईश्वर की दया आपके द्वारा हुई और आपके तथा पड़ोस व गाँव में चोरी करके कोई चोर किसी की सम्पत्ति न हरण करेगा। इस प्रकार ईश्वर की अन्य सब पर दया हुई। ऐसी ही दया सबके लिये कल्याण-कारी है और वास्तविक 'दयालुता' का अर्थ भी यही है।

जो मनुष्य इस प्रकार ईश्वर के तमाम गुण, रूप और नामों का पक्का भक्त होगा और उसके अनुसार आचरण करेगा वह संसार के लिये पूज्य हो जायगा। वह अपना चरित्र सुधारते हुये अन्य लोगों के लिये भी पथ प्रदर्शक बन सकेगा और देश का कल्याण करेगा। वर्तमान प्रचलित घोर नास्तिकता को नष्ट करते हुये सच्ची ईश्वरोपासना का मार्ग बता संसार को सच्चा आस्तिक बना सदाचार का पाठ पढ़ावेगा। सच्चा आस्तिक कभी दुश्चरित्र नहीं हो सकता और सच्चरित्र व्यक्ति कभी भी नास्तिक नहीं हो सकता। आशा ही नहीं पूर्ण भरोसा है कि इस पुस्तक के पाठक सदाचारमय जीवन बनाने के लिये उपरोक्त वर्णन पर अवश्य ध्यान देंगे।

—o—

आत्मिक बल

संसार में रहते हुये मनुष्य को आवश्यक वस्तुओं में जितना आवश्यक शारीरिक बल है उतना ही आवश्यक आत्मिक बल भी है। इसी आत्मिक बल की बदौलत आज बड़े से बड़े कार्य थोड़े समय में और कम श्रम में ही पूरे होते देखे जाते हैं। प्राचीन काल में भारतवर्ष आत्मिक बल का भण्डार माना जाता था। राजा से प्रजा तक ऋषि, मुनि, यति, सती, आदि इस बलके द्वारा आत्माभिमान रखते थे। कराल काल से भी एक बार सामना होने पर दो दो हाथ करने को तैयार रहा करते थे। बड़े २ कठिन और विकट कार्यों को क्षण मात्र में पूर्ण करना इनके बाँयें हाथ का काम था। शक्ति सम्पन्न बड़ी २ प्रतिद्वन्दी शक्तियों को परास्त कर विजय प्राप्त करना इनका नित्य का खेल था। कठिन से कठिन कार्य आ पड़े, भयंकर से भयंकर आपत्तियाँ चढ़ाई कर बैठे, जिस पुरुष में आत्मिक बल है जिस पुरुष को आत्मा बलिष्ट और दृढ़वती है वह कभी भी विचलित नहीं हो सकता। वह कभी भी पराजय को नहीं स्वीकार करता।

जिस समय कौशलपति दशरथ से कोपभवन में रानी केकयी ने दो वर देने की याद दिलाई वह समय राजा, राज्य, और परिवार के लिये कितने संकट का था। यदि कोई कलियुगी दशरथ होते तो क्या उन्हें अपनी की हुई प्रतिज्ञा से पलटते देरी

होती। परन्तु नहीं उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण की। राम भलेही वनवासी हों परन्तु वचनों का भंग होना इष्ट नहीं। इससे बढ़ कर आत्मिक बल और क्या हो सकता है कि राम राज्याभि-लाषा रख कर प्रथम रात्रि में सोते हैं और प्रातः उन्हें १४ वर्ष का बनवास सुनाया जाता है। आज अनेकों 'राम' राम-चन्द्र और राम के भक्त देश में पाये जाते हैं और इस प्रकार की घटनायें भी इस समय में राम के सामने उपस्थित हुआ करती हैं। दुतर्फी जंग छिड़ती है। अनेकों लाशें गिरती हैं। मुकदमें चलते हैं। सम्पत्ति और राज्य नष्ट होते हैं और परिवार तबाह होते हैं। धन्य है आदर्श पुरुषोत्तम भगवान राम को जिनके चेहरे पर जरा भी शिकन न आई और आज्ञा पाते ही वन को रवाना हो गये। इतना बड़ा चक्रवर्ती राज्य त्याग वन का पथिक बनना आत्मिक बल का कारण था। इसी आत्मिक बल के कारण लक्ष्मण-भरत और सीता का भी आत्मिक बल जाग उठा। यदि वर्तमान समय में राम होते तो उनके कलियुगी भाई भरत, लक्ष्मण और सीता, शाम होने के पहिले ही सारा सामान टाँगे और गाड़ियों पर लदा, माल लगेज से बुक करवा सीधे चित्रकूट को रवाना करवा देते और चले जानेके बाद उनके पत्रों का जवाब देने के लिये एक पोष्ट कार्ड के लिये)॥। भी खर्च न करते। आज देश में कौन ऐसा नवयुवक है जो अपने भाई के लिये राम जैसा आदर्श आत्मत्याग करने को तैयार हो।

आज भी देश में 'राम के भक्तों' और रामायण का पाठ करने वालों की कमी नहीं है। क्या इनमें कोई ऐसा है जो अपने बड़े और छोटे भाई के लिये अपना आत्मिक बल दिखाने को तैयार हो? यदि ऐसा होता तो आज देश और मानव जाति के सिर पर पराधीनता पिशाचनी न नाचती होती। आज तो भाई भाई लड़ रहे हैं। दो दो फुट जमीन के लिये डंड-मुण्ड सम्मेलन हो रहा है। एक दूसरे के खून के प्यासे हो रहे हैं और उचित अनुचित जो कुछ हो रहा है इसका एक मात्र और प्रधान कारण है आत्मिक बल का न होना।

आज तो दासता में ही आनन्द और पराये टुकड़ों पर जीवन व्यतीत करना ही मानवधर्म रह गया है। मानवता ने दानवता का रूप धारण कर रक्खा है। छोटी २ विपत्तियों से विचलित होकर क्षण २ नियम नीति और उद्देश्य बदलते रहना ही वीरत्व की परिभाषा हो रही है। आज सारा मानव समाज ऐसी भीषण परिस्थिति में से गुजर रहा है जहाँ ब्रह्मचर्य और सदाचार का पूर्ण अभाव है। कहीं २ ब्रह्मचर्य की शिक्षा दी जाती है परन्तु उनके साधन ऐसे विलक्षण ढंग पर बना रक्खे गये हैं कि जो सिवा ढोंग के और कुछ नहीं। ब्रह्मचारियों के स्थान पर व्यभिचारी और दुराचारी ही अधिकतर पैदा हो रहे हैं। यही कारण है कि आज आधुनिक शिक्षा प्रणाली इस कुरीति के बढ़ाने में सहायक हो रही है।

कभी २ ब्रह्मचर्य्य और सदाचार का प्रताप दिखाई दे जाता है। आज तो किसानों की टूटी फूटी झोंपड़ी से लेकर राव उमरावों की ऊँची २ अट्टालिकाओं में वास करने वाले मनुष्यों में कोई विरला ही व्यक्ति होगा, जिसने भारतीय हृदय सम्राट महात्मा गाँधी की उस समय की अद्भुत शक्ति और आत्मिक बल का प्रभाव न देखा सुना हो। जब कुछ समय पहिले वह जेल में थे सारा संसार त्राहि २ कर रहा था किन्तु वह पुरुष-सिंह अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करने में तल्लीन था। उसके मुख से निकली हुई प्रत्येक बात को संसार चकित हो कर सुन रहा था। आज भी सारा देश उन्हें अपना पथ-प्रदर्शक मानने को तैयार है। यह उन्हीं के आत्मिक बल का प्रभाव है कि अभी २ फैजपुर काँग्रेस में जो कि बिलकुल देहात है १॥ लाख जन संख्या रोज दिखाई दी। और देहाती डाकघर से ५० लाख शब्द विदेशों को तार से बाहर भेजे गये। गवर्नमेण्ट की रिपोर्ट बता रही है कि देश में कोई ऐसी सार्वजनिक संस्था सिवा कांग्रेस के नहीं है जिसके समाचार इतने अधिक शब्दों में विदेशों में पढ़े गये हों। अनेकों विघ्न बाधाओं के होते हुये भी सारा मानव समाज दर्शन मात्र के लिये उतावला हो जाता है।

आज महात्मा गाँधी ने थोड़े से ब्रह्मचर्य, सदाचार तथा आत्मिक बल के द्वारा थोड़े ही काल में वह कार्य कर दिखाये कि बड़ी २ शक्तियाँ थर्रा गईं। बड़ी से बड़ी आपत्तियाँ उनका

कुछ न बिगाड़ सकीं । बड़ी २ बाधाओं को वह मुस्कुराकर टाल दिया करते हैं। उनकी मुस्कुराहट पर सारा संसार बलि हो जाता है। यह है आत्मिक बल का प्रताप।

—०—

सभ्यता क्या है ?

कोई भी व्यक्ति संसार में अकेला है यह जिसके हृदय के अन्दर विद्यमान है वह वास्तव में मनुष्य नहीं । यदि विचार कर देखा जाय तो ज्ञात होगा कि समस्त मानव समाज एक बड़ा शरीर है और प्रत्येक व्यक्ति उसका एक अङ्ग है । इस मानव समाज के प्रति उसका व्यवहार किस प्रकार का होना चाहिये। सभा, समिति तथा देश के भले बुरे व्यक्तियों के सम्मुख किस प्रकार का वर्ताव करना चाहिये यह जानना सबके लिये अनिवार्य है और यही व्यवहारिक सभ्यता है।

प्रायः देखा जाता है कि इस विषय की ओर लोग बड़ी असावधानी से कार्य करते हैं। माता पिता और गुरु भी इस शिक्षा की ओर ध्यान नहीं देते। इसका फल यह होता है कि बालक तथा बालिकाएं युवा अवस्था की इस असावधानीके कारण बुरी से बुरी प्रकृति और अभाव के शिकार हो जाते हैं। यद्यपि लाड़ प्यार के कारण लोग उनकी ओर ध्यान नहीं देते और कहा

करते हैं अभी बच्चा है आगे चल कर ठीक हो जायगा। अभी है ही कितने दिन का। बड़े २ लिखे पढ़े लोग भी तो अमुक २ प्रकार की भूलें किया करते हैं, इस प्रकार के विचार विनिमय करते और मनही मन प्रसन्न हुआ करते हैं।

बड़े २ विद्वान और संस्कृत के पंडित व्याकरणाचार्य 'जो है सो जाय करके क्या नाम करके, ऐं ऐं ऐं का कहावत है' आदि अनर्गल और निरर्थक शब्दों का बार २ प्रयोग करते पाये जाते हैं। एक कालेज के प्रोफेसर जब क्लासमें भूगोल के पाठ का व्याख्यान दे रहे थे लगभग ४५ मिनटके घंटे में 'समझे कि नहीं' वाक्य का प्रयोग कमसे कम २५ बार किया होगा। एक स्कूल के हेडमास्टर अपने अन्य सहायक अध्यापकों के कन्धे पर हाथ रख नाज अदा के साथ समस्त स्कूली लड़कों के सम्मुख भौं चमकाते और आँख मटकाते नाच करते गा रहे थे। "प्यारे मोहनियाँ निभाना होगा, जाम पीना होगा पिलाना होगा।"

जब शिक्षित समाज की यह दशा है तो मध्यम श्रेणी की बीभत्सता का वर्णन क्या करें? क्योंकि जो दुष्ट स्वभाव और गंदी आदतें बालपन में पड़ जाती हैं वह ज्यों की त्यों जीवन पर्य्यन्त रहती हैं। इनसे बचने तथा इनके सुधार का सबसे अच्छा उपाय यही है कि जिस आदत को स्वयं बुरा समझते हों और दूसरे के लिये शिक्षा देते हों उन्हीं आदतों को अपने में तलाश करें। यदि वह आदतें उनमें पाई जाय तो तुरन्त निःसंकोच

हो कर उसी समय उससे बचने का प्रयत्न करें। और भविष्य के लिये सावधान हो जाँय।

जिस गुण का प्रभाव अपने पर पड़े उसको अपने जीवन में उतारने के इस अवसर से न चूकना चाहिये। ऐसा न समझे कि यह तो एक मामूली सी घटना है अथवा इसका जीवन पर क्या प्रभाव पड़ सकता है। उपेक्षा की दृष्टि छोड़ दें। थोड़ा २ करके इकट्ठा करने पर जिस प्रकार धन अधिक हो जाता है उसी प्रकार अच्छे गुणों की ओर जरा भी उपेक्षा करने से धीरे २ उपेक्षा भी अधिक हो जाती है और अंत में किसी भी अच्छी से अच्छी शिक्षा का प्रभाव नहीं पड़ सकता। सारी शिक्षा बेकार हो जाती है।

नशीली वस्तुयें।

आयुर्वेद के विद्वानों का मत है कि मादक पदार्थ नशा उत्पन्न करने वाले होते हैं अर्थात् जिस वस्तु के सेवन से मनुष्य की बुद्धि नष्ट भ्रष्ट हो जाय, होशहवास न रहे चैतन्यता जाती रहे उसे मादक वस्तु कहा जाता है। इन वस्तुओं के सेवन से इन्द्रियाँ लोलुप हो जाती हैं और मनुष्य को कुमार्ग जाने का सीधा रास्ता मालूम हो जाता है।

महात्मा टाल्स्टाय ने अपनी पुस्तक "टाल्स्टाय के सिद्धान्त" में लिखा है कि जिस समय मानव हृदय सुमार्ग पर चला करते हैं तरह २ के उत्कृष्ट और उच्च विचार सामने आया करते हैं। हृदय में शुभ कार्य की भावनायें उत्पन्न होने लगती हैं। ठीक उसी समय इन सब सद्इच्छाओं को दबाने के लिये कुवासनायें सामने उपस्थित होती हैं। यदि इस समय मनुष्य अपनी इन्द्रियों का दास न बन कर अथवा चैतन्यता को न खो कर सद्बुद्धि से कार्य करे तो कुवासनायें नष्ट हो जाती हैं और सद्-भावनाओं की विजय होती है। परन्तु कुवासनाओं के चक्कर में पड़ कर विरले ही मनुष्य रक्षित रहते हैं। इसका फल यह होता है कि वे नाना प्रकार के मादक वस्तुओं का प्रयोग कर बैठते हैं और फिर सदैव के लिये कुवासनाओं के शिकार होकर नशा करने पर उतारू हो जाते हैं।

दुर्भाग्य से आज भारतवर्ष में मादक वस्तुओं का विशेष रूप से प्रचार है। चाहिये तो यह था कि कड़े से कड़े नियम बना कर राज्य शान्ति के द्वारा इस सत्यानाशी विष को देश से निकाला जाता, परन्तु जब अपना ही दाम खोटा है तो परखने वाले को क्या दोष दिया जाय। फल स्वरूप राज्य शक्ति की इस प्रकार की उपेक्षा इस कोढ़ के लिये खाज हो रही है। आज देश का बच्चा बच्चा प्रत्यक्ष और गुप्त रीति से किसी न किसी मादक वस्तु का दास बन रहा है। वर्तमान समय में कोई ऐसा

शहर नगर कस्बा गाँव खाली नहीं, जहाँ शराब गाँजा अफयून चरस भाँग तम्बाकू आदि की खपत न होती हो। कम से कम चार आने पैदा करने वाला एक गरीब मजदूर भी शाम को अधिक नहीं तो दो आना अवश्य किसी न किसी नशे के लिये दे देवेगा ही। अधिकतर निम्न श्रेणी के लोग इसी कारण तंग और परीशान रहा करते हैं। अशिक्षित और निम्न श्रेणी के लोग यदि चरस गाँजा भाँग शराब आदि में फँसे हैं तो शिक्षित समुदाय तम्बाकू सिगरेट बीड़ी के द्वारा अपना कलेजा जला कर समाज में भूकम्प पैदा कर रहा है। इस सत्यानाशी बीड़ी और सिगरेट का घर २ इतना अधिक प्रचार हुआ है कि छोटे २ बच्चे इसके अभ्यास के लिये उतावले हो रहे हैं। विद्वानों का कथन है कि आज देश में मृत्यु संख्या के अधिक होने का कारण नशीली वस्तुओं का प्रचार है। हम इस सम्बन्ध में निस्सन्देह यह कहने के लिये तैयार हैं कि संसार के अन्य देशों की अपेक्षा भारतवर्ष में इन नशीली वस्तुओं का प्रचार अधिक है और दिन २ बढ़ता जा रहा है। इसप्रकार की यह उन्नति निम्न श्रेणी की अपेक्षा उच्च और शिक्षित समुदाय में ही अधिक है। इससे यह प्रकट है कि सुधार के लिये सभा सोसाइटियों की योजनायें सफल नहीं हो रही हैं और लोग साहस छोड़ बैठे हैं।

वास्तव में आज भारतवर्ष की इतनी अधिक हानि का कारण मादक वस्तुयें ही हैं। इसी के कारण सारी शारीरिक

शक्तियाँ क्षीण हो रही हैं देश जाति और धर्म के विकास का मार्ग बंद हो रहा है। जिस प्रकार तेल के अभाव से जलता हुआ दीपक ठंडा पड़ जाता है उसी प्रकार मादक द्रव्यों की प्रबलता से वीर्य हत हो रहा है। ग्रीष्म की गर्मी बड़वानल के सुखाने में जिस प्रकार का सामर्थ रखती है नशीली वस्तुओं का सेवन वीर्य के विनष्ट करने में किसी प्रकार कम नहीं।

आज कल साधु सन्यासी कहलाने वाले नामधारी संत तथा नागा लंगोट का ढकोसला करने वाले नंगे साधु प्रायः यह कहते पाये जाते हैं कि हमने इसी लिये गाँजा भाँग चरस आदि को सेवन किया है कि जिससे वीर्य की उत्पत्ति न हो और प्राप्त वीर्य नष्ट हो जाय। इस वाक्य में कुछ भी मिथ्या नहीं। इन अनपढ़ और मूर्ख साधुओं का यह विज्ञान सत्य से खाली नहीं है। यह सब देखते हुये भी हम बराबर उसी लकीर के फकीर बने हुये हैं और इस तरफ ध्यान नहीं देते। मादक वस्तुओं के इस विनाशक परिणाम को जानते हुये हम उन्हीं में लिप्त रहने की कोशिश कर रहे हैं और अपनी भावी संतति के लिये बुरा उदाहरण पेश करते हैं।

माता पिता के दुर्व्यसन को देखकर ही बच्चे यह सबक सीखते हैं। प्रायः देखा जाता है कि कोई २ माता पिता अपने बच्चों को इस व्यसन के लिये रोकते और कड़ी ताड़ना दिया करते हैं परन्तु जब स्वयं वे इस दोष से युक्त हैं तो बच्चों पर

उनकी इस शिक्षा का क्या असर पड़ सकता है ? इसका फल यह होता है कि बच्चे लुक-छिपकर नशा पिया करते हैं और पूर्ण रूप से नशेबाज बन जाते हैं ।

छोटे बच्चों को नशीली वस्तुओं के खाने की आदत पान खाने से आरम्भ होती है और यही धीरे २ पूर्ण नशेबाज बना देती है । माता पिता से जेब खर्च के पैसों का मिलना और भी सोने के लिये सुहागे का काम देता है । इस फजूल खर्च के कारण वह मनमाना नशा करने पर उतर आते हैं । प्रायः यह दोष अमीरों के बच्चों को सबसे अधिक ग्रसता है और इनकी संगति में रहनेवाले साधारण स्थिति के बालक भी इनके चक्कर में आये बिना नहीं रहते ।

जिन बालकों को जेब खर्च के लिये पैसे मिला करते हैं उनकी आदतें किस प्रकार बिगड़ती हैं इसका ज्ञान प्राप्त करना हो तो माता पिता को लुक-छिपकर देखना चाहिये । इस पैसे से यह लोग भोग विलास की भ्रष्ट सामग्री, गंदे अश्लील चित्र, भ्रष्ट पुस्तकें खरीदते और नाना प्रकार के भक्ष्याभक्ष्य पदार्थ खाते हैं । बाजार में बिकनेवाली चटपटी, नमकीन, मिठाइयां उड़ाते और मस्तिष्क को नष्ट किया करते हैं । फल यह होता है कि वे दुराचारी और व्यभिचारी हो जाते हैं । उनकी भावनायें घृणित हो जाती हैं । अनेकों रोगों के शिकार हो जाते हैं और अपना सर्वनाश कर डालते हैं ।

सदाचार और शिष्टाचार

एक रूसी इतिहासकार ने एक कहानी में लिखा है कि एक अमीर घर का लड़का था खर्च के लिये माता की ओर से बराबर रुपये मिला करते थे। एक दिन वह बाजार गया मार्ग में एक सुन्दरी वेश्या को देखकर उस पर आसक्त हो गया। वह उसके कोठे पर चढ़ गया और पूर्ण रूपसे उसके चक्कर में फँस गया। इस दुर्व्यसन के कारण माता पिता के मरने के पश्चात् भिखारी हो गया। अपनी दीन दशा पर दुखी होकर एक दिन उसने लिखा था "मेरे सर्वनाश के लिये अधिक दोषी मेरे माता पिता हैं यदि उन्होंने मुझे इतने पैसे न दिये होते तो आज मेरी यह दशा न होती"। इससे यह प्रकट हो गया कि अधिक पैसे पास रहने से बालक अवश्य पथ-भ्रष्ट हो जाते हैं।

—o—

शुद्ध चित्त और दृष्टि

शुद्ध विचार मन की एक अद्भुत शक्ति है। मनुष्य इसकी आज्ञानुसार प्रतिदिन कार्य करता है। जैसा उसके मन में आता है उसीप्रकार के कार्य भी करता है। संसार में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं जिसके दिल में भिन्न २ प्रकार के विचार न उठा करते हों। प्रत्येक कार्य करने के पहिले मनुष्य कुछ न कुछ विचार

अवश्य रखता है अतः इस बात की अत्यन्त आवश्यकता है कि मन में उठने वाले विचार उन्नत और कल्याणकारी हों। यदि उठते हुये विचार उत्तम होंगे और उनमें शुद्ध और भली भावनायें होंगी तो जीवन सुखप्रद होगा। सारी बाधायें दूर हो जावेंगी। संसार में लोगों की ओर से उत्साहवर्द्धक आशीष और सहानुभूति की प्राप्ति होगी । इसप्रकार के पवित्र विचार ही उन्नति के साधन हैं। जिनके दिल में सदैव शुद्ध विचार उत्पन्न होते हैं वह कभी भी कुमार्गगामी पापी या व्यभिचारी नहीं हो सकते। उनका चित्त अधर्म की किसी भावना पर विश्वास नहीं कर सकता। सारी कर्मेन्द्रियाँ उनके वशमें रहा करती हैं। सदाचार के द्वारा मनुष्य सदैव अपने शरीर की सारी शक्तियों की रक्षा किया करता है। शुद्ध विचारही उसका परममित्र है। यही विचार यदि अशुद्ध होजाय तो उस व्यक्ति को पतित होते देर नहीं लगती और कुछ समय के बाद वह कौड़ी का तीन भी महँगा हो जाता है। अतएव उचित है कि अपने विचार शुद्ध और पवित्र बनाये रखने की कोशिश की जाय। इसी शुद्ध विचारको अपना पवित्र व परम मित्र एवं हितैषी समझे और कभी भी इसका साथ न छोड़े। ऐसी असुविधा न पैदा होने दें कि मैत्री में किसी प्रकार की त्रुटि होने की सम्भावना हो।

शुद्ध विचार ही ब्रह्मचर्य का पौष्टिक पदार्थ हैं। प्रायः देखा जाता है कि मनुष्य की इन्द्रियाँ किसी भी वस्तु को अथवा किसी

भी नवीन दर्शनीय दृश्य को देखकर फड़क उठती हैं और शीघ्र ही उसी ओर को झुक जाती हैं। यदि विचार में अपवित्रता होगी तो भी शुद्ध विचार एक बार उसे उस कुमार्ग में जाने के लिये उभड़ेंगे और भ्रष्ट मार्ग से वापस करने की कोशिश करेंगे। उस समय यदि मन उन पवित्र विचारों की निषेधाज्ञा न मानकर उसी अनीति की राह पर चला गया तो फिर सर्वनाश कर लेगा और सदैव के लिये शुद्ध विचार नष्ट हो जावेंगे और वह पथ भ्रष्ट हो जावेगा।

शुद्ध विचार के लिये शुद्ध दृष्टि की आवश्यकता होती है। 'मातृवत् परदारेषु' पराई स्त्रियों को माता के सदृश जानो। माता का स्थान संसार में सबसे उच्च होता है। वह जननी है। दुनिया में सभी प्राणी संदेह की दृष्टि से देखे जाते हैं परन्तु माता पर अविश्वास नहीं किया जा सकता। पुत्र कुपुत्र होता है परन्तु माता कुमाता नहीं। ब्रह्मचारी तथा सदाचारी के लिये संसार की सभी स्त्रियाँ माता स्वरूप हैं जब यह ध्यान सदैव दिल में रहेगा तभी मनुष्य सदाचारी रह सकता है और अपने कर्तव्य का पालन कर सकता है। सदाचारी को उचित है कि वह किसी स्त्री को कुदृष्टि से न देखे। किसी के रूप लावण्य को अपने चित्त में स्थान न दे। यदि कभी ऐसा हो तो समझो कि वह मातृवत् है बस सारी खुराफात जादू मंत्र की तरह काफूर हो जायगी। कुविचार युक्त वासनायें चित्तसे दूर हो जावेंगी और

हृदय दर्पण की भाँति स्वच्छ हो जावेगा । माता नाम माहात्म्य के आगे कोई पाप टिक न सकेगा ।

पाप का बीज अधिकतर नेत्रेन्द्रियों के द्वारा ही प्राप्त होता है । यह नेत्र ही सर्व प्रथम पाप की ओर अग्रसर करते हैं । इसलिये किसी भी स्त्री से बातचीत करते समय अपनी आँखें नीचे रखनी चाहिये । आँखों पर अपना शासन होना चाहिये । स्त्री समाज में अधिक न जाना चाहिये । जिन लोगों की संगति बुरी है । या कुकृत्य करने के लिये नित्य कुमार्ग पर ही जाने के इच्छुक रहा करते हैं उनका संसर्ग अधिक नष्टकारी होता है । ऐसे लोगोंसे जहाँ तक हो सके दूर रहना चाहिये । किसी व्यक्ति के किसी गुप्त अंग को देखने की कोशिश न करनी चाहिये यदि अकस्मात् किसी का कोई गुप्त अंग दिखाई भी दे जावे तो उधर से दृष्टि फेर लेना चाहिये और चित्त में उसका असर न जमने देना चाहिये ।

महाभारत में लिखा है कि अर्जुन एक बार घूमते २ इन्द्र के दरबार में जा पहुँचे । उनकी कीर्ति और सौन्दर्य पर उर्वशी नामक अप्सरा आसक्त हो गई । उर्वशी ने अर्जुन से निवेदन किया कि मेरी अभिलाषा है कि मेरे गर्भ से आपही जैसा तेजस्वी और शक्तिशाली पुत्र उत्पन्न हो अतएव रति दान दीजिये । परन्तु उन सच्चे वीर आदर्श पुरुष सिंह अर्जुन ने कहा मां ! यदि तुझे पुत्र की कामना है तो मुझे ही अपना पुत्र मान ले !

मैंने आज से तुझे अपनी माता मान लिया। उर्वशी शर्म से कुछ उत्तर न दे सकी और सिर नीचा कर चली गई। यदि आजकल के भ्रष्ट आचार विचार के कुकर्मी मनुष्य होते तो तुरंत फिसल जाते और अपना मुँह काला कर लेते। यह है मातृभाव और सच्चा आदर्श!

आज सारे संसार में विलासता का साम्राज्य है। ऐसी अनेक प्रकार की शृंगारमय वस्तुयें चारों तरफ फैली हुई हैं जो हर क्षण आँखों के सामने आकर सदाचार को नष्ट भ्रष्ट करने के लिये उतावली सी दिखाई देती है। और क्षण क्षण आँखों में चकाचौंध पैदा करती रहती हैं। यही सब वस्तुयें स्वभावतः कामोत्तेजक हुआ करती हैं और मन को अपवित्र करने का साधन बनती हैं। जब इन वस्तुओं का अभ्यास किया जाता है तो चित्त में एक विचित्र प्रकार का तूफान उठने लगता है। उस तूफान को शांत करने के लिये लोग पाप वृत्ति की ओर चल पड़ते हैं।

—·०—

सात्विक भोजन

आयु, ओज, बल, आरोग्य सुख और प्रीति का बढ़ानेवाला सरस चिकना और रुचि को बढ़ाने वाला सात्विक भोजन ही होता है। इस प्रकार का भोजन सात्विक विचार वाले व्यक्तियों को प्रिय होता है। इस प्रकार के आहार से मन शुद्ध, चित्त शांत होता और काम क्रोध मद-लोभ आदि शत्रुओं का नाश होता है। भोजन की स्वच्छता से चित्त प्रफुल्लित रहता है और बुद्धि तीव्र होती है।

अत्यन्त उष्ण, चटपटा, चरफरा, अधिक मीठा, कड़ुवा, खट्टा, नमकीन, बाजारू चाट, लहसुन प्याज मिर्च, हींग गाँजा भाँग आदि सेवन करने वाले की प्रवृत्ति राजसी होती है। इसके कारण आसुरी वृत्तियाँ जाग उठती हैं। और मनुष्य मनुष्यता के पद से गिर जाता है।

बासी, सड़ागला, रसहीन, शुष्क भोजन खाने से तामसी वृत्ति के गिने जाते हैं। ऐसे आदमी की बुद्धि नष्ट हो जाती है और सदाचार का नाश होकर दुराचारी प्रवृत्तियाँ प्रबल हो उठती हैं। सदाचार का व्रत लेने वाले अथवा ब्रह्मचारी के लिये उचित है कि सदैव सात्विक पदार्थों का ही सेवन करे। भोजन उचित मात्रा में ही करना चाहिये अधिक खाने से उदासी बढ़ जाती है अनपच हो जाता है और जठराग्नि मंद पड़ जाती है जिसके कारण अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। शुद्ध मन पाप

वासनाओं की ओर बरबस भागने लगता है। स्वप्नदोष प्रायः इसी कारण हुआ करता है। सात्विक भोजन भी ताजा ही खाना चाहिये। बासी हो जाने से तामसी हो जाता है।

फल प्राकृतिक पदार्थ है। इनमें स्वभावतः इस प्रकार के गुण छिपे रहा करते हैं जिनसे जीवन शक्ति का विकास होता है। प्राचीन काल के लोग कभी भी पूड़ी कचोड़ी समोसा आदि अभक्ष्य और अस्वास्थकर पदार्थ नहीं खाते थे। उनका जीवन सदा फलाहार पर ही व्यतीत होता था यही कारण है कि उनकी चैतन्य शक्ति और आत्मिक बल बढ़ा हुआ था। आजकल भी व्रतों के समय पर फलों का व्यवहार किया जाता है। इसका कारण केवल यही है कि फलों की शक्ति मनुष्य को सदाचरण के लिये अधिक सहायक होती है। बुद्धि निर्मल हो जाती है। काम वासनाओं का नाश होता है। आयु की वृद्धि होती है। चित्त स्थिर और प्रसन्न रहता है। और हृदय में ज्ञान का प्रकाश होता है। पेट में कोई रोग नहीं रह सकता। शरीर पुष्ट और तेज से भर जाता है। इन्द्रियाँ मन के शासन को मान लेती है।

दूध—इस संसार में अमूल्य पदार्थ है। इसके पीने से शरीर सबल होता है। वीर्य धारण की शक्ति उत्पन्न होती है। मन शांत रहा करता है। चित्त में सदैव धार्मिक भावनाओं का विकास होता है। साहस की वृद्धि होती है। मस्तिष्क शीतल और स्फूर्ति-युक्त रहता है। वीर्य सम्बन्धी रोग नष्ट होते हैं।

प्राणायाम

सदाचारी के लिये प्राणायाम की बड़ी आवश्यकता है। खेद है कि इस विज्ञान की ओर अधिकतर लोग ध्यान नहीं देते। जिस प्रकार अग्नि में डाल देने से धातुओं का मैल छूट जाता है उसी प्रकार प्राणायाम करने से इन्द्रियों के सम्पूर्ण रोगों का नाश होता है। वीर्य की रक्षा होती है इसके द्वारा मनुष्य शरीर में ब्रह्मचर्य का विकास होकर मानसिक शक्तियों की वृद्धि होती है।

प्राणायाम के अनेक भेद है पर विशेष रूपसे केवल तीन ही प्रसिद्ध हैं। पूरक-रेचक और कुम्भक।

पूरक-नासिका के पीछे बाँयें छेद को दाहिने हाथ के अंगूठे से दबा कर वायु को धीरे २ भरना चाहिये।

कुम्भक-दो अंगुलियों से नाकके वायें छेद बन्द कर पेट में भरी हुई वायु को बरबस रोकना चाहिये।

रेचक--वायें छेदके द्वारा पेट की भरी वायु को धीरे २ निकालना चाहिये।

इस प्रकार सायंकाल कम से कम १५ मिनट तक अवश्य प्राणायाम करना चाहिये। इस समय वायु शुद्ध होनी चाहिये। मन प्रसन्न और सचेत होना चाहिये। इसप्रकार प्राणायाम करने वाला व्यक्ति बड़ी २ शक्तियों पर विजय प्राप्त करता है। उसके

हृदय में दूषित विचार नहीं उठते जिससे मनुष्यत्व का संहार हुआ करता है। बुद्धि का विकास हुआ करता है। हृदय में आत्मज्ञान का प्रकाश होता है। मनकी प्रकृति शुद्ध होती है और स्वास्थ्य सुधर जाता है और जीवन सदाचारी होजाता है।

सदाचार की साधना के लिये लंगोट अत्यन्त आवश्यक है इससे लिंगेन्द्रियकी उत्तेजना शांत रहा करती है। चितमें वीरता और पवित्रता के भाव उठा करते हैं। अण्डकोष लटक कर नीचे नहीं होते पाते। कुछ लोग लंगोट का बाँधना बुरा समझते हैं। लेकिन वास्तव में यह विचार ही बुरे हैं जिसे हमारे इस कथन पर संदेह हो वह शीघ्र लंगोट का उपयोग आरम्भ कर दें। कम से कम एक वर्ष पर्यन्त अवश्य धारण करे और इसकी बुराइयाँ प्रकाश करे। हमारा दावा है कि उसे अवश्य लाभ होगा और वह अपनी भूल स्वीकार करेगा। लंगोटसे वीर्यकी रक्षा होती है और सदाचार का मार्ग प्रशस्त होता है। पतले कपड़े का एक पर्त का लँगोट ही सुविधा जनक होता है मोटे कपड़े का अथवा दोहरा लँगोट हानिकारक है। इससे वीर्य नष्ट होने की सम्भावना रहा करती है। जहाँतक होसके लंगोटको रोजाना धोकर साफ रखना चाहिये अन्यथा गन्दा रहने से काछ सम्बन्धी रोग उत्पन्न हो जाते हैं। सदाचारीको उचित है कि वह संसारिक चटक मटक से दूर रहें और वैराग्यका भाव धारण करे। जो व्यक्ति इस अमोघ रहस्यको समझ लेता है उसे संसार की कोई भी मायाविनी शक्ति

कभी मार्ग से विचलित नहीं कर सकती सौन्दर्यमयी रमणियों का कृत्तिम सौन्दर्य उसकी वैराग्यमय आँखों के सन्मुख हलाहल के प्याले के समान है। वह उनकी ओर से उपेक्षा दृष्टि कर और विराग का सच्चा रूप समझकर अखण्ड प्रेम का राग अलापता है। विषयासक्ति उसके हृदय से निकल जाती है। समस्त स्त्री पुरुषों के शरीर को केवल माँस पिण्ड ही समझता है। संसार की कोई वासना उसे न फँसा सकेगी।

एकबार महाराज युधिष्ठिरसे भीष्म पितामहने कहा कि बिना समझे बूझे जो लोग काम करते हैं वह दुष्ट चेष्टावाले लोग दुराचारी कहलाते हैं और सदाचार परायण लोगही सज्जन कहलाते हैं। सदाचारी लोग आम सड़कों पर, खाद्य पदार्थों में और गौ-आदि पशुओं के रहने के स्थान पर गंदगी नहीं फैलाते। सदाचारी पुरुष को सूर्य नमस्कार नित्य करना चाहिये। सूर्योदय के बाद तक सोते रहना ठीक नहीं। प्रातःकाल पूर्व दिशा की ओर और सायंकाल पश्चिम दिशा की ओर मुखकर ईश्वर का चितन अवश्य करना चाहिये। जो भोज्य पदार्थ खाये जा रहे हों उनकी निन्दा नहीं करनी चाहिये। नौकर अतिथि तथा परिवारके लोगों को एकही प्रकार का भोजन देते रहना चाहिये। व्यर्थ तिनका तोड़ना दातों से नाखून काटना, हमेशा कुछ न कुछ खाते रहना यह असभ्यता की निशानी है। बड़े बूढ़ोंको आते देखकर उनका आदर करना चाहिये। उदय होते हुये सूर्य तथा दूसरे की नङ्गी

स्त्री को न देखना चाहिये। पापियों की आँखें और चेहरे उनके पाप को प्रगट कर देते हैं। मूर्ख, जान बूझकर अपने से अपना पाप छिपाता है वह नष्ट हो जाता है। यद्यपि छिपकर किये गये पाप को दूसरे लोग नहीं देखते तथापि वे पाप उसके प्रकट ही हो जाया करते हैं। छिपाने से पाप बढ़ता और पापी का सर्वनाश हो जाता है।

मूर्ख लोग पाप करने के बाद अपने कुकर्म को भूल जाते हैं किन्तु समय पाकर उनका पाप उदय हो जाता है। धर्माचरण में किसी के सहायता की प्रतीक्षा न करनी चाहिये। वेदोक्त धर्म अकेले ही किया जाता है, धर्माचरण ही सदाचरण है।

—o—
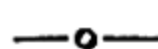
सूर्य नमस्कार

प्राचीन काल में देश में सूर्य-नमस्कार की प्रथा थी उसी का रूप बिगड़ कर आज ऐसा कृत्तिम हो गया है कि सिवा ढकोसला के और कुछ नहीं रहा इसमें जरा सा सुधार होना चाहिये तो पूर्ण लाभ की सम्भावना है।

सूर्य नमस्कार प्रणाली का पुनरुद्धार करने वालों में सर्व प्रथम औंध नरेश श्री बाला जी साहब पंत का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इन्हीं की लिखी पुस्तक ने सर्व प्रथम लोगों का

ध्यान इधर फिराया। प्रथम संस्करण अँग्रेजी में होने के कारण इतनी प्रिय ज्ञात हुई कि उसके कई संस्करण निकाले गये और हिन्दी में भी उसका अनुवाद हुआ। परन्तु पुस्तक का मूल्य अधिक होने से सर्व साधारण लाभ न उठा सकते थे अतः अपने पाठकों के लाभार्थ यहाँ उसकी विधि संक्षेप में बताते हैं।

सूर्योदय के प्रथम शौच तथा स्नानादि के उपरान्त समतल जमीन पर पूर्व की ओर मुँह करके खड़े होना चाहिये इस समय शरीर पर कम से कपड़े होना चाहिये।

प्रथम दोनों पैरों पर की एँडियों को परस्पर मिला कर दोनों हाथों की हथेलियों को जोड़ सीधे खड़ा होना चाहिये दोनों हाथ छाती के सन्मुख एक दूसरे से मिले रहे। फिर लम्बी साँसे लेकर सीने को फैलाना चाहिये और पाँवों को सिकोड़ना चाहिये। फिर भुजाओंको खड़ी करके शरीर को सीधा खड़ा करना चाहिये। चित में ईश्वर के गुणों का चिंतन करना चाहिये। कि वह दयालु-परोपकारी-न्यायी-अजन्मा-सर्व शक्तिमान आदि है।

इसके बाद सामने झुक कर दोनों हथेलियों को पट जमीन पर रक्खे। झुकते समय यह ध्यान रहे कि घुटने न झुकने पावें। माथा झुककर घुटने के पास आ जावे ऐसी कोशिश करना चाहिये। यदि माथा घुटने से मिलाने में कुछ कष्ट हो तो पेट की भरी वायु कुछ निकाल देना चाहिये। फिर बाहों को सीधा करते हुए टाँगोंको १-१ करके पीछे दूर जहाँतक फैल सके फैलाना

चाहिये। यह रहे कि पैर मिल कर ही रहें और साँस रुकी रहे।

इसके पश्चात् हाथों को मोड़कर नीचे को झुको और माथा जमीन पर रख दो सारा शरीर जमीन पर हो लेकिन जमीन का सहारा न हो सिर्फ घुटने जमीन छूते रहें। इसके पश्चात् हाथों को सीधा करके सिर को ऊपर ऊँचे उठाओ गर्दन पीछे की ओर फिराते हुए आकाश देखने का प्रयत्न करना चाहिये। इसप्रकार एक नमस्कार पूरा होता है। कम से कम २५ बार नमस्कार करना आवश्यक है। प्रत्येक नमस्कार के साथ गायत्री मंत्र अर्थ के साथ मनही मन पाठ करना चाहिये। इसप्रकार का नमस्कार सदाचारी के लिये कल्याणकारी है।

—✿✿—
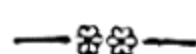
ईश्वर वन्दना

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत।
सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥१॥
य आत्मदा वलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवा।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२॥
यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इन्द्राजा जगतो बभूव।
य ईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा येन स्वः स्वभितं येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥४॥
प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥५॥
स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यत्र देवा अमृतमानशाना स्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥६॥
अग्नेनय सुपथा राये अस्मानि विद्वान देव वयुनानि विश्वानि ।
युयोध्य स्मज्जुहुराण मेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्ति विधेम ॥७॥

—*—

मातृभूमि वन्दना

सुजलां सुफलां मलयज शीतलां ।
शस्य श्यामलाम् मातरम् ॥ वन्देमातरम् ॥
शुभ्र ज्योत्स्नां पुलकित यामिनीम् ।
फुल्ल कुसमित द्रुमदल शोभिनीम ॥
सुहासिनीम् सुमधुर भाषणीम ।
सुखदाम वरदाम् मातरम् । वन्देमातरम् ॥
त्रिंश कोटि कण्ठ कल कल निनाद कराले ।
द्वित्रिंश कोटि भुजैर्धृत खर करवाले ॥
के बोले माँ तुमि अवले ?
बहुबल धारिणीम् नमामि तारणीम् ।

रिपुदल वारिणीम् मातरम् ॥ वन्देमातरम् ॥
श्यामलाम् सरलाम् सुस्मिताम् भूषिताम् ।
धरणीम् भरणीम् मातरम् ॥ वन्दे मातरम् ॥

—※—

भारतीय शिष्टाचार

शिक्षित तथा सभ्य पुरुष जो व्यवहार आपस में किया करते हैं उसे शिष्टाचार कहा जाता है। परस्पर प्रेम और आदर का परिचय देते हुये किसी के साथ कष्ट, असुविधा तथा भार रूप न बन बैठना शिष्टता है।

शिष्टाचार के नियम सबको बचपन ही से सीखना चाहिये। नियम मालूम रहने से ही उन पर चलना सहल होता है। यह नियम भिन्न २ प्रान्तों में भिन्न २ रूप से प्रचलित हैं। परन्तु आधुनिक समय में जो लोग प्रान्तीयता का ख्याल न कर सार्वदेशिक रूप से अपना आचार उच्च बनाते हैं वे चाहे किसी प्रान्त में चले जावें किसी के सम्मुख अनादर के पात्र न होंगे।

मानव जीवन सीखने के लिये है। मनुष्य को ऐसा स्वभाव डालना चाहिये कि जिससे मिलें उससे कुछ न कुछ गुण अवश्य सीखें।

जो व्यक्ति अपने को भरा पूरा अर्थात् सर्वगुण सम्पन्न समझता है वह न तो अपनी उन्नति ही कर सकता है और न उसे अधिक कुछ करने का साहस होता है।

जिसने अपना धन खोया उसने कुछ नहीं खोया। जिसने स्वास्थ्य खोया उसने कुछ खोया परन्तु जिसने अपना आचरण खो दिया उसने सर्वस्व खो दिया।

"हम बिगड़ते हैं तो इस में किसी के बाप का क्या बिगड़ता है ?" ऐसा मत कहो यह बड़ी भारी भूल है।

जो शुभ कर्म, दुष्टों को साधु, मूर्खों को विद्वान, शत्रु को हितचिन्तक और हलाहल विष को अमृत तुल्य बनादे और मनोवाञ्छित फल की प्राप्ति करादे उसी के पीछे चलिये। बहुत से अच्छे गुणों के फेर में न पड़िये।

यह बात अच्छी प्रकार चित्तमें जमा लेनी चाहिये कि प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन का स्वयं विधाता है। अपने जीवन में सफलता और असफलता पाना उसीके कर्त्तव्य का फल है।

मनुष्य उसी समय तक असहाय तथा बेबस रहता है जब तक वह अज्ञान है। ज्ञान का प्रकाश होते ही वह स्वयं सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है।

उद्योगी पुरुष को ऐश्वर्य अपने कर्त्तव्य से प्राप्त होता है। परन्तु कायरों को भाग्य से मिलता है। यदि भाग्य ही सर्व प्रधान हो तो उद्योग करने के लिये फिर क्यों उतावले होरहे हो।

नेपोलियन बोनापार्ट का कहना था कि जो लोग 'असम्भव' रटा करते हैं वह मूर्ख हैं। असम्भव शब्द की सृष्टि मूर्खों के कोष में होती हैं।

जो समय कार्य करने का है उसमें कार्य करना चाहिये और जो खेलने का है उसमें खेलना चाहिये। सभ्य और सुखी होने का यही सरल मार्ग है।

प्रत्येक मनुष्य के सम्मुख हर समय कर्म खड़े रहा करते हैं जहाँ जरा ढील देखी सिरपर सवार हो जाते हैं। ऐसे समय पर यदि मनुष्य चूक जाता है तो पतित हो जाता है।

आज का काम कल पर छोड़ने वाला व्यक्ति कभी भी अपना काम पूरा नहीं कर सकता। वह धीरे २ कर्त्तव्य विमूढ़ हो जाता है।

उद्योगी और उत्साही पुरुष के संकल्प मात्र से ही संसार काँप उठता है। और उसके कार्य में सहायता देने के लिये अनेक सहायक उत्पन्न हो जाते हैं। वह जो चाहता है कर सकता है।

जिस बात का संकल्प कीजिये उसे दृढ़ता से कीजिये, इससे आत्मा पवित्र होगी और अपने कर्त्तव्य पर सन्तोष होगा।

उत्साह मनुष्य को बड़ी कठिनाइयों से निकाल कर उन्नति के मार्ग पर पहुँचाता है। किसी काम के लिये सुयोग की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी आवश्यकता उत्साह की होती है।

जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक है कि हर समय तैयार रहे। यदि कठिनाइयाँ और संकट आ पड़े तो छाती खोल देना चाहिये।

यदि मनुष्य का सर्वस्व नष्ट हो जावे तो उसे घबराना नहीं चाहिये बल्कि अपने जीवन पर्यन्त अभ्युदय की इच्छा रख प्रयत्न करना चाहिये। अवश्य कृतकार्य होगा।

जो मनुष्य नीच हैं वे विघ्न के भय से कभी किसी काम को आरम्भ ही नहीं करते। जो आरम्भ करके मध्य में छोड़ बैठते हैं वह मध्यम श्रेणी के लोग हैं परन्तु वारम्बार विघ्नों के आने पर भी जो लोग अपने कार्य को नहीं छोड़ते वही उत्तम पुरुष सफल मनोरथ होते हैं।

सफलता तो असफलता के वाद ही प्राप्त होती है। जो असफलता से घवरा कर कर्त्तव्य से विमुख हो बैठता है उसे किसी कार्य में सफलता नहीं मिलती। प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि जीवन-संग्राम के विषय में किसी एक विषय की जानकारी अवश्य प्राप्त करे। और कुछ विषयों में सब कुछ जानने की कोशिश करे।

महापुरुषों का चित्त वैभव में कमल के समान कोमल होता है परन्तु आपत्ति में चट्टानों से टक्कर लेने वाले वज्र के समान कठोर हो जाता है।

प्रातःकाल नित्य अपने बड़ों को मातृ भाषा में नमस्ते या प्रणाम करो, इससे उनका आशीर्वाद तुम्हारे लिये कल्याणकारी होगा।

यदि कहीं किसी नये आदमी से परिचय हो जाय तो

उसको आदर सूचक नमस्कार करो। परन्तु जब तुम्हें यह ज्ञात हो जाय कि अमुक व्यक्ति धूर्त और दुराचारी है तो उपेक्षा का भाव दिखलाना ही श्रेयस्कर है।

पत्र लिखते समय, नाम के प्रथम श्रीमान् बाबू, महाशय, मौलवी, महोदय आदि शब्दों का यथोचित प्रयोग करना चाहिये। जहाँ नाम न लिखा जा सके वहाँ गुरुवर, मान्यवर, पण्डितजी, प्रियवर आदि शब्दों से सम्बोधन करना चाहिये। अपने नाम के प्रथम पण्डित आदि शब्द कभी भूलकर न लगाना चाहिये।

यदि अपने बृद्ध और गुरुजनों के साथ चलने का मौका हो तो कुछ पीछे रहकर चलना चाहिये।

पुरुषार्थ ही मनुष्यत्व का जीवन है। जिस पुरुष में पुरुषार्थ अथवा उद्योगशीलता की कमी है उसे पुरुष कहना ठीक नहीं। अटल खड़े रहना और पुरुषत्व को न छोड़ना ही पुरुषत्व है।

प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि प्रत्येक विषय में कुछ न कुछ अवश्य जानकारी प्राप्त करे परन्तु कुछ विषयों में तो पूर्ण रूप से ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

दूसरे के मुँह की ओर ताकना अथवा परतन्त्र रह कर उसकी इच्छानुसार जीवन व्यतीत करना सफलता के लिये अत्यन्त हानिकारक है। हम अकेले क्या कर सकते हैं? इस

प्रकार अधःपतनकारी विचारों को कभी अपने हृदय में स्थान न देना चाहिये।

प्राचीन वीरों की वीरता का दृष्टान्त ही प्रत्येक पीढ़ी के साहस का स्रोत होता है। और पूर्वज वीरों के दृष्टान्त से उत्ते-जित होकर मनुष्य धीरता से बड़े भयावने कार्य करने लगते हैं।

सदाचार सदैव दुराचार का शत्रु है। यह बात सम्भव नहीं कोई व्यक्ति सदाचारी होते हुये अस्वस्थ और दुखी हो।

पतंग रूप देख कर, हाथी विषयेन्द्रिय के वश होकर हिरन कर्णेन्द्रिय के वश होकर, भौंरा नासिका के वश होकर और मछली जीभ के वश होकर जाल में फँस कर नष्ट हो जाती है। जिस मनुष्य की पाँचों इन्द्रियाँ पाँचों विषयों में लिप्त हैं वह किस प्रकार नष्ट होने से बच सकता है? जो लोग अपने सदा-चार को किसी इन्द्रिय की तृप्ति पर बलिदान कर देते हैं वह कभी स्वतन्त्रता का मुँह नहीं देख सकते।

—*—

शिष्टाचार

अपने से बड़ों को सदा श्रीमान्, मान्यवर, पूज्यवर, मित्रवर, प्रियवर, शब्दों से यथायोग्य सम्बोधन करो।

यदि कोई व्यक्ति अपने घर मेहमान बन कर आवें तो उसके स्वागत के लिये खड़े हो जाना चाहिये। जब वापस जाने लगे

तो दरवाजे अथवा कुछ दूर आगे चल कर पहुँचा आना चाहिये ।

यदि कोई अतिथि अपने मकान पर अपने यहाँ की रीति के प्रतिकूल कोई व्यवहार कर बैठे तो उसकी इस बात पर हँसो मत ।

मेहमान के साथ बैठ कर अथवा एक पंक्ति में बैठ कर यदि खाने का मौका लगे तो जल्दो २ मत खाओ और न जल्दी उठने की चेष्टा करो ।

जिनके यहाँ मेहमान बन कर जाना हो उनका भोजन का समय पहिले ही पूछ लेना चाहिये । यदि न जाना हो तो पहिले से स्पष्ट कह दो ।

परस्पर सहभोज में निमंत्रण स्वीकार करके ठीक समय पर अवश्य पहुँच जाना चाहिये, न जाना सभ्यता के विरुद्ध है ।

किसी का नाम पूछना हो तो "आप का शुभ नाम क्या है" शब्द द्वारा प्रार्थना करनी चाहिये ।

जिन शब्दों का शुद्ध उच्चारण न ज्ञात हो उन्हें व्यवहार में न लाना चाहिये ।

अपने मुँह से कभी किसी के प्रति अशुभ सूचक, घृणोत्पादक और अनादर के शब्दों का प्रयोग न करना चाहिये ।

अपने किसी व्यवहार से ऐसी स्थिति न उत्पन्न करो कि जिससे किसी को असुविधा हो । हाँ यदि अपने सुकर्त्तव्यों के

कारण किसी दुराचारी को कुछ हानि हो तो यह उसके कर्मों का फल है।

यदि किसी दरबार या सभा में कुछ कहने की इच्छा हो तो बिना सभापति की आज्ञा लिये कुछ मत बोलो।

जिस सभा में जाओ उसके नियमों का पालन करना आवश्यक है। कार्यकर्ताओं की किसी कार्यवाही पर अनुचित आक्षेप न करो। व्याख्यान के समय शोर न मचाओ और अनुचित हरकतें न करो।

यदि किसी सभा में जाना हो तो समय के पहिले जावे और सभा की समाप्ति के पश्चात् आवे। सारे कार्यों को ध्यान से देखे और विचार करे।

सभा में किसी ऐसे स्थान पर न बैठना चाहिये जहाँ से उठा देने की सम्भावना हो। जहाँ से उठा दिये जाने की सम्भावना हो वहाँ बैठनाही न चाहिये।

किसी आदमी से शीघ्र ही घनी मित्रता उत्पन्न करना अच्छा नहीं। एक बार मित्र बनाकर फिर साधारण सी बात के लिये रूठ बैठना और मित्रता तोड़ना सभ्य व्यवहार नहीं कहलाता।

भारतीय आर्य सिद्धान्त बालक और बालिकाओं के एक साथ रहन सहन, खान पान, सहशिक्षा-सहगमन को निषिद्ध ठहराते हैं।

नवयुवकों को स्त्रियों के संसर्ग से दूर रहना चाहिये। इससे स्वभाव दूषित हो जाता है।

नीच की संगति से सदैव दूर रहो। नशेबाज और व्यभिचारियों से आवश्यकता पड़ने पर भी पहिले बातचीत ही न करो। यदि उनको सहज ही टाल न सको तो थोड़ी बातचीत के पश्चात् शीघ्र ही बात खतम कर दो।

स्त्रियों के साथ कभी लड़ाई नहीं छेड़नी चाहिये। उनके प्रति दिल में मातृ भाव रहना चाहिये और सदैव उन्हें सुविधा ही पहुँचाते रहना चाहिये।

नदी तालाब अथवा किसी अन्य स्थान पर स्नान के समय अथवा कपड़े बदलते हुये कुचेष्टा से ताकना दुश्चरित्रता का प्रमाण है।

स्त्रियों के झुंड में घुमना या उन्हें देख कर हँसना गाना या चुटकी बजाना खाँसना या बातचीत की चेष्टा करने की प्रवृत्ति नीच है।

यदि स्त्रियों से वार्तालाप का अवसर आ पड़े तो उनके मुँह की ओर न देख कर हमेशा नीची दृष्टि रक्खे। आवश्यकता पड़ने पर ऊपर देख कर फिर नीची दृष्टि कर लेनी चाहिये।

सूने घर में एकाएक न घुसना चाहिये। स्पष्ट अथवा संकेत में पहिले अन्दर सूचना देने के पश्चात् जाना चाहिये। यदि ऐसा

करने में कुछ रुकावट मालूम हो तो कुछ देर के लिये बाहर ही रुक जाना ठीक होगा।

दिल्लगी में भी गन्दे तथा अश्लील शब्दों का प्रयोग न करना चाहिये। यदि मजाक ही करना हो तो अलंकारिक रूप से करना चाहिये।

अपने किसी साथी-सहपाठी को नीच दृष्टि से न देखो और न घृणास्पद समझो। यदि किसी साथी को तुम वास्तव में बुरा समझते हो तो उसपर अथवा किसी अन्य पर उसके प्रति यह विचार प्रकट करना सभ्यता और चतुरता का लक्षण नहीं।

माता पिता आचार्य के प्रति सदैव नम्रता के वचन उच्चारण करना चाहिये। सदैव शांति तथा गम्भीरता से उनसे बोलना चाहिये।

परधर्मावम्बी के मंदिरों मस्जिदों तथा धर्म स्थानों में न जाना चाहिये। यदि जाने की इच्छा हो तो यह अच्छी तरह चित्त में धारणा करलो कि यदि उनके प्रति आदर न प्रकट कर सको तो अनादर भी न प्रकट होने देना चाहिये।

यदि किसी के धार्मिक विश्वास से आप सहमत न हो तो उसकी हँसी उड़ाना ठीक नहीं।

दूसरों के धार्मिक कृत्यों में दखल न देना चाहिये और न उसकी हँसी उड़ानी चाहिये। यदि तुम वास्तव में इसे बुरा सम-

झते हो तो उसकी बुराइयाँ उसे किसी ढंग पर समझाना चाहिये कि वह समझ जाय और उस कर्तव्य को छोड़ दे।

—*—

ज्ञान की बातें

आलमारी सन्दूक या बक्स से किसी वस्तु को निकालने के पश्चात् उसे तुरन्त बन्द कर देना चाहिये।

छड़ी छाता डंडा या बेंत कार्य होने के पश्चात् यथा स्थान रखना चाहिये। इधर उधर रख देने से खराब होने या गायब हो जाने का डर रहेगा।

यदि कपड़े धोने के लिये धोबी को देना हो तो उसकी जेब देखलो और संख्या और नाम अलग-अलग लिख लो।

सिर पर टोपी पहनने के पहिले उसे अन्दर से देख लो और कोट कुरते आदि भी बिना एक बार झटका दिये न पहिनो।

किसी खिड़की के बाहर सड़क पर कोई चीज न फेंको यदि फेंकना ही अनिवार्य हो तो ऐसे स्थान जहाँ पर किसी का अनिष्ट न हो।

इक्के आदि सवारियों पर सदैव सावधानी से बैठना चाहिये।

रेलगाड़ी जब स्टेशन पर खड़ी हो जाय तभी चढ़ना उतरना चाहिये। चलती ट्रेन पर सवार होना या उतरना खतरे में फँसना है।

चलती गाड़ी में उधर मुँह न करो जिधर इञ्जन हो। ऐसा करने से धुयें के साथ कोयला आँख में जाता है और दर्द पैदा करता है।

यदि तुम रेल पर सवार हो और अपने से अधिक स्थान शेष हो तो अन्य यात्रियों को गाड़ी पर चढ़ने से न रोको। बल्कि चढ़ने वालों की सहायता करो।

यदि नाव पर चढ़ने का मौका पड़े तो सावधान रहो। यदि नाव किनारे से हट चुकी हो तो चढ़ने की कोशिश न करो।

शीशा लोहा टीन तथा मिट्टी के टूटे वर्तन रास्ते में नहीं फेंकना चाहिये। इससे चलने वालों को कष्ट होता है।

चाकू को काम करने के पश्चात् तुरन्त बंद करके रख दो। यदि ऐसी छुरी है जो बीच से मुड़ नहीं सकती तो काम करने के पश्चात् तुरन्त अलमारी या आले में रख देना चाहिये।

रास्ते में चलते समय छाता छड़ी घुमाते हुये न चलना चाहिये। कभी रास्ते में खड़े हो कर बात मत करो। यदि ऐसा मौका आपड़े तो कुछ दूर रास्ते से हट जाना चाहिये।

यदि सड़क पार करनी हो तो दाहिने बायें देख कर चलना चाहिये। एक पटरी से दूसरी पटरी पर सबसे छोटे रास्ते से जाना चाहिये।

नदी पार करने के लिये कम चौड़ा तथा थोड़े पानी का स्थान देख लेना उत्तम होता है।

रेल नाव तथा गाड़ी पर सवार हो तो साथ के बच्चों को सदैव बीच में बैठाना चाहिये।

भीड़ में सदैव रास्ता बना कर निकल जाना चाहिये। यदि कोई व्यक्ति आपसे आगे निकलने की कोशिश करे तो बुरा न मानना चाहिये।

जिधर देखो उधर ही चलना ठीक होता है। यदि पीछे देखना हो तो अच्छा हो कि रुक जाओ।

किसी स्थान को छोड़ते समय उसे फिर कर देख लेना चाहिये कि कोई वस्तु छूट तो नहीं गई है।

कभी आवश्यकता से अधिक पानी न खर्च करना चाहिये। यदि गंगा आदि बड़ी नदियों में स्नान करना हो तो अधिक से अधिक पानी उपयोग में लाना चाहिये।

मकान में यदि पानी की कल लगी हो तो खुली मत छोड़ दो। व्यर्थ पानी बहाना ठीक नहीं।

बिना जरूरत बिजली की रोशनी भी खुली मत रक्खो। यदि अंधेरे में बिजली जलाने की आवश्यकता हो तो बहुत सावधानी से काम लो।

बिजली का स्वीच दबाते समय यह ध्यान रक्खो कि कहीं लग पर हाथ न पड़ जावे।

दिवालों पर किसी किस्म की लिखावट लिखना अच्छा नहीं।

चाकू के द्वारा टेबुल तथा अन्य सामान व्यर्थ छीलना ठीक नहीं।

साफ़ बिस्तरे पर पैर पोंछ करही बैठना उचित है।

अपने नित्य के उपयोग में आने वाली वस्तुओं के स्थान निश्चित कर लो। काम करने के पश्चात् फिर तुरंत वहीं रख दो।

यदि तैरना नहीं जानते तो पानी में मत उतरो। बिना पानी की थाह पाये पानी में नहीं उतरना चाहिये।

"आप भूलते हैं" "आपने समझा नहीं" ऐसा कहना असभ्यता है। यदि आपकी बात कोई न समझ सके अथवा ठीक उत्तर न देवें तो उसे मूर्ख न कहना चाहिये बल्कि यों कहना चाहिये "मालूम होता है मेरा कहा हुआ वाक्य स्पष्ट नहीं था।"

"नो एडमिशन" "अन्दर आना मना है" जहाँ इसप्रकार के वाक्य के बोर्ड लगे हों वहाँ बिना आज्ञा लिये अन्दर न जाना चाहिये। यदि जाना आवश्यक हो और आज्ञा देने वाला भी कोई न हो तो किसी के आने तक इन्तजार करो। अधिकतर स्थानों में ऐसे २ नोटिस बोर्ड व्यर्थ भी लगे होते हैं।

यदि कोई वस्तु किसी से उधार ले आये हो तो उसे किसी को उधार में मत दो। टूट जाने या खो जाने पर बिना माँगे

वह वस्तु उसी प्रकार की तुरंत खरीद कर वापस कर देना चाहिये।

लिफाफा बंद करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि अन्दर की चिट्ठी उसमें न जुड़ जावे।

लिफाफा चिपकाते समय कभी जीभ से न चाटना चाहिये।

किताब का पन्ना उलटते समय थूक लगाना अच्छा नहीं।

दियासलाई जलाने के पश्चात् ऐसी जगह पर न फेंको जहाँ काई जलने वाली चीज पड़ी हो। तनिक सी आग की चिनगारी भीषण रूप धारण कर लेती है।

यदि किताब पढ़ते २ चित्त ऊब जाय अथवा कहीं जाना हो तो तुरंत किताब बंद कर देना चाहिये।

पुस्तक को पैरों तले रौंदना, तकिया बनाना या उनको मोड़ना अच्छा नहीं। उनको अपना 'सच्चा साथी' समझो।

जो कुछ लिखो साफ लिखो ऐसा न लिखो कि पढ़ने वाला न पढ़ सके। यदि पढ़ने वाला हजार कोशिश करने के बाद भी न पढ़ सका तो तुम्हारा लिखना पढ़ना व्यर्थ है।

—✿—
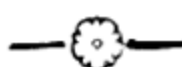
नीति की बातें

यदि कोई व्यक्ति रुपया पैसा मिठाई आदि कोई वस्तु देवे तो विना विचारे अथवा बिना माता पिता की आज्ञा पाये न लेना चाहिये।

यदि किसी को कोई वस्तु देना हो तो दाहिने हाथ से देना चाहिये और दाहिने ही हाथ से लेना भी चाहिये।

स्त्री या बच्चे पर कहीं आक्रमण हो अथवा वे किसी संकट में फंसे हों तो उस समय शीघ्र उनकी सहायता करनी चाहिये।

किसी के मकान के उस हिस्सेमें जहाँ स्त्रियाँ रहती हों कभी न जाना चाहिये। इसका अच्छा अभ्यास अपने घर से ही आरम्भ किया जा सकता है। सभ्यता इसीसे प्राप्त होती है। स्त्रियों के आने जाने के मार्ग से होकर कभी मत जाओ। नदी आदि जलाशयों में स्त्रियों के घाट पर मत नहाओ।

जिस कमरे में स्त्री अकेली हो, अनजान हो स्नान करती हो, या पर्दे में रहने वाली हो वहाँ नहीं जाना चाहिये।

हमेशा सादे और स्वच्छ कपड़े पहिनना चाहिये। जेवर तो भूलकर भी न पहिनना चाहिये।

जेवर पहिनकर बाहर चलने वाले अधिकतर डाकू चोर और उचक्कों द्वारा अधिक कष्ट पाते हैं। कितने ही आदमियों की जान तक मारी जा चुकी है।

कभी बच्चों के हाथ में पैसा नहीं देना चाहिये और न इस प्रकार की आदत डालने की शिक्षा देनी चाहिये।

यदि तुम किसी से बात चीत कर रहे हो और ठीक उसी

समय कोई छोटा बच्चा कुछ बात पूछना चाहता हो तो शीघ्र ही उसकी बात सुन लेना चाहिये।

अपने लड़के और लड़कियोंके प्राचीन प्रथानुसार सुन्दर और शुद्ध नाम रखना चाहिये। चिथरू, घसीटू, मँगरू, सुकरुआ, बुधनी, कतवरिया नहीं रखना चाहिये। बच्चों, स्त्रियों और नौकरों को कभी नहीं मारना चाहिये। उनकी कमजोरी सबके सामने न कहकर एकान्त में समझा देना चाहिये।

खाना खाते समय पहिले छोटे बच्चों को खिलाना चाहिये। पहिले सबसे छोटे बच्चे को खाना देना चाहिये।

किसी के घर जाने का सौभाग्य मिले तो उनके घर के बच्चों को पहिले पुचकारने और खुश करनेका प्रयत्न करना चाहिये।

यदि तुम्हारे यहाँ किसी शुभ अवसर का भोजन हो और अपने मित्रों को निमन्त्रित करो तो उनके छोटे बच्चों को बुलाना मत भूलो।

जब तक कोई भारी अपराध न हो जावे तब तक किसी की रोजी पर आघात न करना चाहिये।

नौकरों को भी भोजन विश्राम का समय उचित समय पर देने की सुविधा कर देनी चाहिये। बिना ऐसा किये कोई नौकर अधिक समय तक आपके यहाँ न ठहर सकेगा।

धोबी, नाई तथा नौकरों से व्यर्थ की बकवाद कभी मत

करो। उनसे दूसरों के घरों की बातें न पूछो। यदि वह लोग इस प्रकार की बातें करें तो नहीं सुनना चाहिये।

जिसके यहाँ मेहमान बनकर जाओ, चलते समय उनके नौकरों को यथाशक्ति कुछ इनाम अवश्य देना चाहिये।

यदि कोई मित्र या सम्बन्धी के यहाँ से भेंट या बायना में मिठाई या फल फूल आदि आवे तो लानेवाले नौकरों को कुछ न कुछ इनाम अवश्य देना चाहिये।

सभ्य समाज के बीच खखारना, लम्बी डकार लेना, नाक में उँगली डालना, सिर खुजलाना, पैर फैलाकर बैठना, दांत से नाखून काटना, उँगली से चुटकी बजाना, कपड़ा चबाना, अँगड़ाई लेना, कान खोदना आदि बुरा समझा जाता है।

पान खा कर कभी अधिक पीक मुँह में नहीं इकट्ठी करनी चाहिये। पीक भरे हुये मुँह से कभी गलगल करके बात नहीं करनी चाहिये। यह असभ्यता है।

सड़क पर चलते समय कभी किसी के गले या कन्धे पर हाथ डाल कर चलना ठीक नहीं।

यदि किसी की कोई वस्तु पहुंचाने का भार अपने ऊपर लो तो जिस हालत में वस्तु मिले उसी हालत में पहुँचा देना चाहिये।

किसी गाड़ीवान, इक्के वाले तथा सवारी वाले से किराये के लिये कभी बकझक नहीं करना चाहिये। ऐसे गरीबों को २-४ पैसा अधिक दे देने से उनकी गरीबी का सहारा होगा।

सदाचार और शिष्टाचार

रेल के प्लेटफार्म या किसी तमाशे के स्थान पर जहाँ टिकट द्वारा प्रवेश हो बिना टिकट न जाना चाहिये।

रेल गाड़ी में बिना टिकट कभी सवार मत होओ ऐसा करने से झूठ चोरी का पाप लगेगा।

जहाँ बैठो, स्थान गंदा न करो। जसे गंदे स्थान पर तुम बैठना पसंद नहीं करते उसीप्रकार दूसरेकी तबीयत भी समझो। ऐसा करन से तुम्हारा आत्मा सदैव पवित्र रहेगा।

जिस स्थान म कई भिन्न भिन्न भाषा के जानने वाले उपस्थित हों वहाँ ऐसी भाषामें बात कहो जिससे सभी एक साथ समझ लवें।

जब तक किसी आदमी से अधिक जान पहिचान न हो या जब तक अच्छी तरह परिचय न हो जाय तब तक किसी को सलाह मत दो।

जहाँ अधिक लोग बैठे हों वहाँ अपनी ही कीर्ति यश तथा रोने की चर्चा मत छेड़ो।

जिस स्थान पर कई आदमी एकत्रित हों वहाँ सिर्फ एक के कान में सब के सामने बात न करो। यदि ऐसी आवश्यकता आ पड़े तो बिलकुल अलग हट जाओ।

किसी सभ्य पुरुष के सामने खड़े होकर धोती या कुरते के अन्दर हाथ डाल कर खुजलाना, अच्छा नहीं।

किसी से उसकी आमदनी वेतन और जात पाँत का पचड़ा न पूछो। यदि पूछना आवश्यक हो तो उससे एकान्त में

ऐसे ढंग से पूछो कि बतलाने में उसे कोई संकोच न हो।

जहाँ दो आदमी बात करते हों वहाँ बीच में मत बोलो। निष्प्रयोजन अधिक बकबक करना भी ठीक नहीं होता।

'का नाम करके' जो है सो जाय करके, ऐं ऐं इत्यादि २ व्यर्थ के वाक्य बोलने की आदत मत डालो। यह सखुन-तकिया बोलना कभी २ सभ्य मण्डली में मूर्खता का चिन्ह समझा जाता है।

घड़ी, ऐनक, और फाउनटेन पेन का यदि उचित उपयोग नहीं कर सकते तो महज शौक के लिये लगाना सभ्यता नहीं। ऐसी बनावट से दूर रहो।

जो व्यक्ति रास्ता भूल कर दूसरे मार्ग पर पड़ गया हो तुरत उसे ठीक प्रकार रास्ता बता देना चाहिये।

कभी गाली गलौज या गंदे शब्द मुँह से न निकालो यदि बचपन में ऐसी आदत लग जायगी तो कभी न छूटेगी और बड़े होने पर सभ्य मण्डली में मूर्ख बनना पड़ेगा।

जहाँ नंगे लुच्चे फाहिशा लोगों की बस्ती हो वहाँ एक क्षण मत ठहरो। जिस शादी बारात या शुभ उत्सव में रंडी भंडुओं के साथ शराब कबाब की व्यवस्था हो वहाँ कभी भूल कर मत जाओ।

किसी स्वतन्त्र देश के राष्ट्रीय झंडे तथा गायन का अनादर

मत करो यदि उस पर विजय प्राप्त करनी है तो नीति से काम लो।

यदि तुम किसी धर्म या सम्प्रदाय के प्रवर्तक को उच्च दृष्टि से नहीं देखते तो यह अपना भाव प्रत्यक्ष प्रगट करके उसे अपने विरुद्ध खड़े होने के लिये मत उभाड़ो। बल्कि अपने धर्म की महत्ता बता कर अपनी बात उसके दिल में जमाने का प्रयत्न करो।

यदि किसी से बहस कर बैठो तो यह याद रहे कि गर्मा-गर्मी अधिक बढ़ने न पावे। एक दूसरे की बातें शांति और सब्र के साथ सुनो।

किसी आफिस या कार्यालय में इस प्रकार न जाओ कि जिससे उसके कार्य कर्ताओं के काम में बाधा उपस्थित हो।

किसी अंधे लंगड़े लूले, तुतलाने वाले तथा अंग भंग को देखकर उसकी हँसी करना ठीक नहीं। तुम अपनी जरासी सहानुभूति से उसकी सहायता कर सकते हो।

यदि तुम्हारी कोई वस्तु खो जाय और वह अन्य किसी व्यक्ति के द्वारा मिले तो उसे धन्यवाद दिये विना उसे मत लो।

यदि किसी के घर जाने का अवसर प्राप्त हो तो यह अच्छी तरह याद रक्खो कि उसकी कोई वस्तु मत छुओ।

किसी लावारिस वस्तु के पाने या दवाने के हक़दार तुम नहीं यह ध्यान रख कर ऐसी वस्तुओं को तुरंत उसके मुख्य अधि-

कारी के पास अथवा किसी सेवा संस्था या पुलिस में जमा करा दो।

अमानत में रक्खी हुई किसी की कोई वस्तु कभी काम में मत लाओ।

कभी अन्य व्यक्ति का हिसाब पत्र या डायरी मत पढ़ो। यदि ऐसा करने की इच्छा हो तो उससे आज्ञा ले लो।

किसी के पत्र कभी लुकछिप कर मत पढ़ो। हाँ यदि किसी की चोरी पकड़नी है तो ऐसे ढंग से कार्य करो कि उसे पता न होने पावे।

किसी खेल, कुश्ती तथा सार्वजनिक चुनाव में हार जाओ तो विरोधी को दोष मत दो। जीतो तो अपने मुँह अपनी तारीफ मत करो।

किसी से मिलो तो बार बार घड़ी की चाल मत देखो। यदि कहीं जाना हो तो स्पष्ट कह कर चल दो।

यदि कोई तुम्हें पत्र भेजे तो उसका तुरंत जवाब दे देना चाहिये परन्तु अधिक पत्र व्यवहार बढ़ाना भी ठीक नहीं।

किसी के अधिक अहसान अपने सर मत लादो। यदि कोई तुम्हारे साथ भलाई करे तो उससे कृतज्ञता प्रकाश करने से मत चूको।

जहाँ तक हो सके कभी किसी सार्वजनिक संस्था के सदस्य न बनो। यदि सदस्य बनना आवश्यक समझो तो पहिले उसके

नियम उद्देश्य अच्छी तरह समझ लो। यदि नियमों का पालन भलीप्रकार कर सको तो ठीक है अन्यथा तुरत सभा से त्यागपत्र दे दो।

किसी सभा सोसाइटी को अपने स्वार्थ साधन का अड्डा न बनाओ इससे बढ़कर अधर्म संसार में और कोई नहीं।

अपनी थोड़ी आमदनी पर संतोष करो। कर्ज लेकर खर्च करना बुरा है।

किसी से किसी वस्तु का माँगना बहुत बुरा है परन्तु माँगी हुई वस्तु को ज्यों की त्यों वापस न देना तो सबसे बुरा है।

जुआ खेलना बुरा है परन्तु लाटरी की लालच में अपना द्रव्य फँसाना तो सबसे बुरा है।

जहाँ तक हो, नीलाम की वस्तुयें चाहें कितने ही सस्ते मूल्य में मिले मत खरीदो।

चुंगी-टैक्स किराया तुरन्त दे देना चाहिये। इस से छिपना ठीक नहीं। अनुभव हीन मनुष्य सदैव नुकसान उठाते हैं।

जनऊ में चाबियों का गुच्छा बाँधकर घुमाना अच्छा नहीं।

पड़ोसी मित्र अथवा रिश्तेदार के यहाँ बुलाने पर शादी आदि शुभ अवसर पर अवश्य जाना चाहिये। मौत या किसी आकस्मिक घटना पर बिना बुलाये तुरन्त पहुँचना चाहिये। और यथा शक्ति अपनी सेवा से उसे लाभ पहुँचाना चाहिये।

किसी जीवित व्यक्ति, नेता, पथ प्रदेशकके नामपर यदि कोई

संस्था सञ्चालन का आयोजन करो तो पहिले उससे सलाह ले लो सभा में कोई पद प्रदान करना हो तो पूछ कर ऐसा करो।

प्रातः काल उठने पर थोड़ी देर तक मौन रहो इस से शक्ति बढ़ती है।

किसी गुप्त घटना का जिक्र करने के पहिले यह अच्छी तरह जाँच लो कि वह मिथ्या तो नहीं है।

नदीमें डूबते हुये आदमीको बचाना अपना कर्त्तव्य समझो परन्तु उतावली में खुद भी पानी में न कूदो बल्कि डोरी रस्सी धोती लाठी या किसी बड़े लट्ठे के सहारे से खींचो। डूबता हुआ व्यक्ति जिस वस्तु को पकड़ पाता है उससे चिपट जाता है।

अनावश्यक खर्च कम कर दो। कमसे कम दशांश अवश्य सुपात्र को दान दिया करो।

जहाँ दो आदमी लड़ते हों वहाँ उन्हें भड़काने का प्रयत्न न करो। कोशिश करो कि झगड़ा शांत हो जाय।

शिक्षितों के सभ्य रोग

कब्ज—अनेक प्रसिद्ध डाक्टरों और अनुभवी वैद्यों का कथन है कि प्रकृति की ओर से मनुष्य के स्वेच्छाचार का यह उचित उत्तर है। जब वह बहुत ही अधिक संख्या में अंट संट पदार्थ खाने लगते हैं और आमाशय को उसे जबरदस्ती पचाना पड़ता

है तो वह असाधारण रूपसे पित्त आदिक पचाने वाले रस तैयार करने के लिये वाध्य होता है यदि मनुष्य के कर्मों की वदौलत अधिक उत्तेजना पाकर सीमाको पारकर जाय तो क्या आश्चर्य?

खेद के साथ लिखना पड़ता है कि अनेकों लोग विशेषकर नवयुवक अपने शरीर की गठन सुधारने की धुन में बहुत अधिक वादाम, पिश्ता, मलाई, मक्खन, घी, दूध, पुलाव तथा मांसादि का मनमाना व्यवहार करके आमाशय शक्तिको निकम्मा कर देते हैं। अपने घर के तैयार सादे भोजन को त्याग करके मित्र कह-लाने वाले शत्रुओं की मण्डली में गुप्त भोज तथा पार्टी में जहाँ रंग विरंगे व्यञ्जन खाने में आते हैं अवश्य सम्मिलित होते पाये जाते हैं।

आजकल स्कूल और कालिजों के पढ़ने वाले नवयुवकों की अस्थिपंजर और मांस पेशियाँ देखकर तो यही कहना पड़ता है कि यह स्कूल कालिज अजीर्ण उन्माद का सीधा रास्ता है। यदि आप को स्वयं ही यह पता नहीं कि आज किस समय पर भोजन करना है अथवा इसके पश्चात् किस कार्य से कहाँ जाना है किस समय विश्राम आदि आवश्यक कार्य करने हैं तो विचारिये कि दूसरों को क्या पड़ी है जो इस प्रकार आप की खबर लेने के लिये उतावले होते रहें। ऐसी दशा में क्षण २ में विघ्न और वाधायें उपस्थित रहेंगी जीवन अव्यवस्था के चक्कर में पड़ जायगा।

यह याद रखिये कि आप भोजन के निमित्त पाकशाला में जा पहुँचे हों अभी खाना भी आरम्भ नहीं किया हो इसी बीच कोई व्यक्ति या अभिन्न मित्र आकर द्वार पर पुकारें तो वह भले ही लौट जावें जब तक भोजन न समाप्त हो जाय तब तक उनकी ओर ध्यान न दीजिये। हाँ यदि वह आकर तुम्हारे साथ भोजन में सम्मिलित हो सकें तो कोई हरज नहीं शीघ्र बुला लो। कहीं बाहर हों और खाने का समय हो गया हो तो सब काम छोड़ कर दौड़िये और निश्चित समय पर भोजन अवश्य करिये।

रात के १० बजे अवश्य सो जाइये। यदि इस समय कोई छेड़ता हो तो कड़ी डाट बताइये। रुचिके विरुद्ध कोई कुछ खिलाता हो तो साफ इनकार कर दीजिये। यदि कोई विना समय के घूमने फिरने अथवा खेल तमाशा आदि दिखाने का लालच दिखा रहा हो तो उससे बात भी न कीजिये। यद्यपि आज कल के लोगों के लिये ऐसा करना कठिन है परन्तु यदि साहस के साथ भारत के लोग इस नीति का दृढ़ अवलम्बन करें तो उन्हें अवश्य सफलता प्राप्त हो सकती है। उन्नत विचार वाले लोगों का इस नीति के बिना काम नहीं चल सकता।

अपनी यह सम्मति बारम्बार अन्य लोगों पर प्रगट करते रहिये कि पूरी मिठाई आदि दरिद्र भोजनों में से है। जिसके घर गृहस्थी नहीं है वह भी बाजार में जाकर कुछ पैसे खर्च कर पूरी मिठाई खा कर शौक पूरा कर सकता है इसलिये किसी को

पूरी मिठाई आदि खिलाना और स्वयं खाना सबसे बड़ा अपमान और मूर्खता का चिन्ह समझिये। नित्य खाने वाला भोजन ही सबसे अच्छा है। अनेकों प्रकार की शाक तरकारी कढ़ी पापड़ तथा मीठे और नमकीन चावल वेसन दूध की चीजें तथा मोटे आटे की रोटियाँ उत्तम भोजन में शामिल हैं। पक्की कहलाने वाली गरिष्ट पूरी आदि का खाना भुला दीजिये। कच्ची रसोईं अर्थात् रोटी दाल शाक आदि का ही रिवाज सहभोजों में चलाइये। इन्हीं के द्वारा आने जाने वालों का सत्कार कीजिये और पूज्य देव ऋषियों को भी यही खिलाइये।

क्या ही अच्छा होता यदि तमाम भारतवर्ष में एकही प्रकार के भोजन का प्रवंध होता। यदि ऐसा हो जाय तो कब्ज जैसे मूँजी रोग तो चुटकी वजाते देश से विदा हो जावें। जो लोग नित्य अंट संट और गरिष्ट भोजन करते रहते हैं वे यदि उसे छोड़ कर एक सादा भोजन आरम्भ करें और देश के समस्त हिस्से में वही प्रणाली चल जाय तो बड़ा आनन्द हो। जब हम आचार विचार भाषा भूषा और वेष में एक समान बनने का दम भरते हैं तो भोजन सामग्री में एक सामान क्यों नहीं बनते। भिन्न २ प्रान्त वासियों को अधिकतर परस्पर मिलने जुलने के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है। यदि आसाम का एक व्यक्ति पेशावर जा पहुँचे तो उसे भी वही भोजन सामग्री मिल सके जो अपने मकान पर वह खाता रहा है। ऐसा होने से देश के दूर से

दूर के स्थानों पर जाने पर भी कोई अपने को परदेशी न समझ सकेगा और स्वास्थ्य में किसी प्रकार त्रुटि न होगी। यात्रा दिन प्रति दिन सुखप्रद होती जायगी। व्यापार तथा व्यवसाय के लिये निकले हुये लोगों के लिये तो बड़ा सुन्दर अवसर होगा सभी गरीब अमीर के लिये एकही दर पर नित्य नियम से समय पर सबको सामान तैयार मिला करेगा।

प्रमाण के लिये देखिये जब कोई अंग्रेज कलकत्ते से बम्बई जाना चाहता है तो न तो अपने साथ में मिठाई पकवान के बण्डल बाँधता है और न इसको कोई फिक्र ही होती है जहाँ जिस स्टेशन पर चाहे तुरन्त का तैयार ताजा भोजन मिल जायगा। स्थान २ पर होटल इस काम के खुले हुये हैं वहाँ के खानसामा को पता रहता है कि चाहे इंजीनियर हों या स्टेशन मास्टर कलेक्टर हो या उच्च घराने का कोई यात्री अंगरेज। सब एकही खाना खाते हैं सब स्थानों में तैयार पाते हैं। कहिये किसी अंग-रेज का कब्ज की शिकायत सुनी है। किसी को पाचक नमक सुलेमानी तथा कब्ज दूर करने के मसाले चाटते देखा है।

सबसे बड़ी असुविधा तो यहाँ यह है कि अभी दूसरे का बनाया कोई भोज्य पदार्थ खानेके लिये तैयार नहीं होते। भले ही लुक छिप कर अण्ट सण्ट अखाद्य पदार्थ खाते हों। बिना नहाये अशुद्ध और गन्दे हाथों से बनाये हुये मैले वर्तनों द्वारा तैयार कराये हुये भोज्य पदार्थ गटागट उड़ा जावें परन्तु उत्तम रीति से

बनाया हुआ शुद्ध भोजन खाते नानी मरने लगती है। धर्मकी नाक कटती है। इस देश में अभी तक अपना स्थान छोड़ने के पश्चात् दूसरे स्थान के किसी भले परिवार के साथ रहने और मेहमानदारी करने की रस्म नहीं चल पाई है। जहाँ कहीं बाहर गये तो पूरी की दूकान हलवाई तथा धर्मशाला की फिक्र होती है। यात्रा भर इन्हीं की मेहमानदारी में रह कर जब घर लौटते हैं तो एक पेट की बीमारी अवश्य साथ लाते हैं और यात्रा के कष्टों का सामना कर रोते रहते हैं।

क्या ही अच्छा हो किसी कुलीन परिवार में परिचित आदमियों के बीच ठहरा जाय वहीं भोजन का प्रबन्ध कर लिया जाय और चलते समय भोजन का व्यय दे दिया जाय। इसमें यात्री को अपने स्वास्थ्य की चिंता न होगी और ठहरने वाले सज्जन को आर्थिक हानि की सम्भावना न होगी और परस्पर सद्व्यवहार दृढ़ होता जायगा।

आज कल हमारे देश के लोगों में प्रायः देखा जाता है कि झूठा शिष्टाचार और झूठा प्रेमभाव बहुत रहा करता है। बातचीत तो वह लच्छेदार करेंगे कि क्या कोई इनसे बढ़कर हितु होगा। मित्र और मेहमान को सर आँखों पर बिठाने के लिये तैयार होंगे। पसीना की जगह खून गिराने को तैयार होंगे। जान तक दे देने को तैयार होंगे। जहाँ किसी अभ्यागत मित्र के लिये आवश्यक सामान जुटाने का प्रबन्ध करना पड़ता है

या अपने नौकरों के द्वारा सारा प्रबन्ध करा देने का मौका आता है तो बगलें झाँकने लगते हैं और अनेक बहाने बता उसे होटल और धर्मशाला की शरण लेने को बाध्य करते हैं। यह प्रेम और दया का नमूना नहीं अत्यन्त नीचता है।

हमारे देश में प्रायः भोजन का समय दोपहर ही ठीक माना गया है। इसी लिये इसी समय के खाने वाले राजा रंक सभी पाये जाते हैं। विज्ञानवेत्ता भी भोजन का यही समय बताया करते हैं। परन्तु इस समय वर्तमान पठित समाजमें भोजन करने का जो समय निश्चित है उसे देखते तो यही कहना पड़ता है कि सिवा कुलियों या बड़े अफसरों के अन्य लोग इस समय पर खाने का समय ही नहीं पा सकते। यही कारण है कि स्वास्थ्य में अनेक प्रकार की खराबी पैदा करने वाली बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं। यदि यह सम्भव हो जाय कि स्वतन्त्र जीविका वाले अपनी पुरानी प्रथा के अनुसार चलें और दोपहर के पहिले और बाद के ३-३-४-४ घंटे काम के निकाल लें तो समय पर खाना खाने का समय पा जाँय और स्वस्थ्य रह सकें। इसके सिवा वह दूसरे के लिये आदर्श रूप बन सकें और शीघ्र ही स्पष्ट प्रकट हो जाय कि भारत जैसे उष्ण देश में जहाँ ठंडे में सायं-काल काम करने का समय है नवीन प्रणाली ने १० से ४ बजे तक काम करा कर देश के स्वास्थ्य को कितना चौपट किया है।

सदाचार और शिष्टाचार

आज प्रायः शिक्षित वर्ग में अधिक संख्या ऐसे लोगों की पाई जाती है जो कब्ज रोग के शिकार अवश्य हैं और ऐसा होना विद्वत्ता और सौजन्यता का चिन्ह समझा जाता है। प्रायः इस रोग के शिकार सभी व्यक्ति इसकी उपेक्षा करते पाये जाते हैं। प्राकृतिक संयम के अनुसार निरोग हालत में किसी भीतरी अंग की दशा का ज्ञान नहीं हो पाता। इसमें कोई बाधा या पीड़ा भी नहीं होती भोजन के समय एक विचित्र प्रकार का आनन्द मिलता है किंतु विपरीत अवस्था में भोजन करने पर पेट में भारीपन का मालूम होना, पेट में हवा भर जाना, पेट का फूलना दिल का धड़कना तथा सुस्ता होना भोजन में रुचि न होना, यह मन्दाग्नि या कब्ज के लक्षण समझिये।

बड़े २ डाक्टरों का कथन है कि भोजन को बिना चबाये ही निगल जाने के कारण ही कब्जियत की उत्पत्ति होती है। चाहे बूढ़ा हो या जवान। मुँह में दांत हों या नहीं यह सभी के लिये लागू होता है। जल्दी या बिना चबाये खाना निगल जाने के कारण मुँह से राल उचित मात्रा में तैयार नहीं हो पाता। इससे यह पता लगता है कि कब्ज रोग जल्दबाजों का पक्का मित्र है। काम में सदैव लगे रहने वाले जिन आदमियों को भोजन का भी समय नहीं मिला करता या दिमाग़ का काम करने वाले वह लोग जो रसोई घर में १०-१५ मिनट का भी समय नहीं दे सकते, मालूम होता है वह अपने घर वालों पर

बड़ा एहसान जनाते हैं जो मन मार कर उलटे पलटे १०-५ कौर मुँह में डाल कर पानी के साथ गले के पार कर जाते हैं और अच्छी तरह कुल्ला भी नहीं करते। हाथ धोते पोंछते बाहर निकल जाते हैं।

बहुतेरे नवयुवक खाना तैयार होने के १०-१५ मिनट पहिले किताबें बंद कर दो लोटे पानी सर पर डाल नहाने की रस्म अदा कर और व्यायाम की दुर्दशा करने के पश्चात् शीघ्र ही रसोईं घर जा पहुँचते हैं और जल्दी २ थोड़ा बहुत खा पीकर कपड़े पहिन स्कूल का रास्ता लेते हैं। ऐसे ही लोग बाजार में नमक सुलेमानी और पाचक तलाश करते पाये जाते हैं।

डाक्टरों का कथन है कि भोजन के पश्चात् मुँह के अन्दर उँगली डाल कर दाँतों को खूब धोना चाहिये। चूंकि जूठन का अंश दाँत में रह जाने से तुरंत सड़ने लगता है और लार के साथ पेट में जाकर नवीन रोग उत्पन्न करने का कार्य आरम्भ करता है।

भोजन के समय शांत चित्त बैठना चाहिये अधिक बातचीत और बे सिर पैर की गप्प लड़ाना हानिप्रद है। इस समय पर जो वार्तालाप होता है भोजन पर उसका तुरंत असर पड़ता है। क्रोध, चिन्ता दुख तथा मानसिक पीड़ा के समय पाचन शक्ति खराब रहा करती है। बुरे समाचारों को पाकर तथा यात्रा के समय घबराहट के कारण भूख मंद पड़ जाती है।

कब्ज दूर करने के उपाय

१—चाहे जितना भी आवश्यक कार्य आ पड़ा हो शाम सवेरे शौच अवश्य जावे।

२—यदि शौच के पहिले एक गिलास ठंडा पानी पिया जाय तो अधिक अच्छा हो।

३—गरिष्ट और अधिक पुष्टि करनेवाली वस्तुएँ मत सेवन कीजिये। यह सब कब्जियत को बढ़ाने वाली हैं। जैसे बादाम गाजर का हलुआ, पाव रोटी, मखाने की खीर तथा चाय आदि।

४—पेट के नीचे पेड़ू पर कपड़ा भिगो कर धीरे धीरे फेरना चाहिये।

५—गेहूँ का दलिया बिना दूध का, मोटे आटे की रोटी, देशी ईख का गुड़, फल तथा तरकारी खाना चाहिये।

६—खाना खाने के डेढ़ घंटे बाद अच्छी तरह से पानी पीना चाहिये। रात को सोने के पहिले दूध पीने से अवश्य फायदा होता है परन्तु सभीको नहीं। किसी २ को दूधसे भी कब्ज पैदा हो जाता है। ऐसे लोगों के लिये अच्छा मट्ठा बहुत उपयोगी होता है। ऐसे लोग रात में नहीं दिन में मट्ठा का सेवन करें।

७—व्यायाम कब्ज़ के लिये बहुत फायदेमन्द होता है। बन्द मकान में नहीं खुले स्थान का व्यायाम ही इस अवसर पर लाभप्रद होगा।

८—अधिकतर कब्ज के मरीज साइकिल की सवारी पर सैर करने के पश्चात् आराम पाते देखे गये हैं। शहर का वायुमण्डल छोड़कर वे यदि कुछ दिन के लिये गावों की ओर खुली हवा में जावें तो और भी अधिक लाभ उठा सकेंगे।

आवश्यक सलाह

१—पहिले इस बात का पता लगा लेवें कि भोजन में क्या २ वस्तुयें आपको रुचती हैं। यदि इसका अन्दाज मिल जाय तो वही खाना श्रेयस्कर है।

२—कभी बेकार न बैठिये। कुछ न कुछ काम करके ही तबीयत बहलाइये। हमेशा पेट भरने की ही फिक्र में न रहिये।

३—इसका कभी खेद न कीजिये कि आप भोजन कम कर रहे हैं इसलिये दुर्बल हो रहे हैं। यह याद रहे कि कभी भी सादा भोजन के सिवाय ऊटपटाँग न खावें। कुछ दिनों में भोजन अवश्य बढ़ जायेगा।

४—जिस भोजन के कारण तबीयत खराब हुई हो उसे तत्काल सदैव के लिये त्याग देवे।

५—थोड़ा दही नित्य ही खाइये बहुत लाभ पहुँचावेगा। पित्त दोष के लिये यह अमृत का काम करता है।

६—खाना खाते समय यदि देर हो तो अच्छा है यदि अधिक देर तक चबा कर खायेंगे तो आमाशय की खराब दशा होने पर भी पच जावेगा।

७—भोजन के समय पानी कम पीने का नियम बनालो परन्तु एक घन्टे बाद अवश्य ठंडा पानी पियो।

८—भोजन के पश्चात् यदि आध घंटा निश्चेष्ट होकर विश्राम कर सकें तो क्या ही अच्छा हो।

९—भोजन अल्प मात्रा में ही करे। चाय काफी, कहवा शराब आदि उत्तेजक पेय कभी भी न खायें पियें।

१०—गुह्येन्द्रियों को ठंडे जल से कम से कम ४ बार नित्य अवश्य धोवें।

११-कभी कामोत्तेजक पुस्तकें न पढ़ें और न सुन्दरी स्त्रियोंके चित्र अवलोकन करें। एकान्त में किसी स्त्रीसे कभी बात न करें।

१२—मन को काबू में रखने के लिये सत् साहित्य का स्वाध्याय करते रहें। भ्रष्ट साहित्य को कभी न छुयें।

१३—तम्बाकू न तो कभी खाँय, न पियें, न सूँघे ही।

१४—गर्म मसाला या सड़ी गली चीजोंका कभी सेवन न करें।

१५—कपड़े जो पहिनें, सादे साफ तथा ढीले हों।

१६—सदा मन को दृढ़ रक्खो और कामुक लोगों की कुसंगति से बचते रहो। मन और शरीर को कभी सुस्त न होने दो।

१७—कठमुल्ले-कठ भगत तथा पाखण्डी पंडित पुजारी से बचते रहो।

१ —खट्टे कड़ुवे तथा तेल के बने हुये पदार्थ यदि एकदम न खाओ तो अच्छा है।

१९—यदि फलों का व्यवहार रक्खो तो स्वास्थ्य कभी भी नहीं गिर सकता।

२०—यदि रहने के लिये स्वच्छ, प्रकाशयुक्त हवादार कमरा हो तो अधिक अच्छा हो।

२१—यदि स्वप्नदोष की शिकायत हो तो सायं प्रातः तथा जब २ लघुशंका (पेशाब) को जावें तब तब लिंगेन्द्रिय को ठंडे पानी से अवश्य धो डालें। कभी स्वप्नदोष न होगा।

२२—प्रातःकाल जल्दी उठने तथा सायंकाल कम से कम १० बजे तक सो जाने की कोशिश करो।

२३—यदि प्रातः नींद न खुलती हो तो उचित तो यह है कि सोते के समय अपना नाम लेकर अपने लिये संकेत कर कहो "हमे ठीक ३॥ बजे जगा देना" निश्चय ही इसी समय नींद खुल जावेगी। जब चाहो तब परीक्षा कर लो।

२४—हलके कपड़े का लँगोट सदैव बाँधा करो। गर्मी के दिनों मे यदि पसीने से भीग जाय तो बदल दो लेकिन बिना लँगोट के न रहो।

२५—कभी किसी जानवर या पक्षी का जोड़ा (नर मादा) न पालो।

२६—सिनेमा-नाटक कभी मत देखो। शृंगार-युक्त काव्य कभी न पढ़ो।

२७—यदि मन शुद्ध रहेगा तो बुद्धि ठिकाने रहेगी और समय पर ऐसी २ बातें सूझेंगी कि बड़े २ शास्त्री और पंडित तक चक्कर खा जावेंगे।

२८—यदि कामवासना की ओर चित्त चंचल होता हो तो शीतल चीनी तथा कपूर का थोड़ा २ सेवन करते रहना अच्छा है।

—※—

जीवन को उच्च बनाने वाले, महात्मा जेम्स ऐलन के कुछ उपदेश।

शांति का पथ

काम-मानव जीवन के लिये सबसे निम्न प्रवृत्ति है। कोई व्यक्ति इससे नीचे नहीं जा सकता। इस भयानक अंधकार और दलदल में संसार के जीव विचरा करते हैं। वासना, घृणा, लोभ, अभिमान, पाखंड, प्रतिशोध, चुगली, झूठ, निंदा, चोरी, धोखेबाजी, निर्दयता, सन्देह और डाह यही वह पाशविक शक्तियाँ हैं जो सदैव काम के पीछे छिपा रहता हैं।

काम, मानवता का सबसे बड़ा शत्रु है। यह आनन्द का संहारकर्ता तथा शाँति का शत्रु है। इसके द्वारा वह सारी वस्तुयें जो मनुष्य जाति पर कलंक लगाती, अपवित्र करती और अन्त में सर्वनाश कर देती हैं, प्राप्त हुआ करती हैं। शांति के इच्छुक को इस धधकती भट्ठी के बाहर आना पड़ता है।

कामवासना-युक्त व्यक्ति सदैव दूसरों के सुधार का प्रयत्न करता रहता है परन्तु ज्ञानी सदैव अपना सुधार करता है।

कोई भी व्यक्ति यदि उसे देश के सुधारने की धुन है तो अच्छा हो वह पहिले अपने को सुधार ले।

यदि कोई मनुष्य 'सत्य' के दर्शन करना चाहता है तो उचित है कि वह पहिले अपने को पहिचाने। उसे किसी भी ऐसी बात में जिससे उसकी भूलों एवं दुर्बलताओं का भण्डाफोड़ हो लज्जित नहीं होना चाहिये। उसे उस पर्दाफास करनेवाले का स्वागत करना चाहिये जो आत्मज्ञान की प्राप्ति और आत्म-विजय में सहायक हो।

जब तक मनुष्य यह सोचा करता है कि उसके कष्टों का कारण दूसरे लोगों की भावनायें या विचार हैं तब तक वह इन कष्टों के पार नहीं जा सकता। परन्तु जब वह इस कारण को अपने भीतर ढूँढ़ने लगता है तब बेशक वह कष्टों से छुटकारा पाकर आनन्द की प्राप्ति कर लेता है।

उन्नति और विकास की दशा में भय और इच्छायें मिट जाती हैं। प्राप्ति की अभिलाषा और प्राप्त वस्तु के नाश का भय इकदम रह ही नहीं जाता। जहाँ सर्वानन्द के दर्शन होते हैं वहाँ प्रकाश ही प्रकाश होता है। इच्छा और भय का वहाँ क्या काम?

उन्नतिशील मनुष्य वही है जो 'स्व' की कठिन बेड़ियों को तोड़ चुका है। जो बुराइयों पर विजय प्राप्त कर लेता है। वह व्यक्ति अपने आप को पहिचान लेता है।

ज्यों २ मनुष्य के हृदय में ज्ञान का प्रकाश होने लगता है त्यों २ बुराई और अज्ञान की मात्रा विलीन होने लगती हैं।

सत्य मार्ग का पथिक बुराई के लिये आत्म समर्पण नहीं करता। वह तो केवल अच्छाई को ही अपना पथ प्रदर्शक मानता है, और उसी के अनुसार चलता है।

जो मनुष्य सत्य को अपना शिक्षक और सहायक बना लेता है उससे कभी भूल नहीं होती। ज्यों २ वह अपनी त्रुटियों से ऊपर उठता जाता है त्यों त्यों वह सत्य के तुल्य होता जाता है और अंत में वह सत्य में लीन हो जाता है। कष्ट, विघ्न और आपत्तियाँ (जिससे दूसरे लोग घबराया करते हैं) उसके लिये आनन्ददायी सिद्ध होती हैं।

उन्नतिशील मनुष्य के लिये खिन्न होना असम्भव है। खिन्नता और आनन्द हीनता स्वार्थपरता के संग पैदा होती हैं। जहाँ स्वार्थ त्याग है वहाँ इनका पता नहीं।

सब मनुष्यों एवं सब जीवों के प्रति चाहे वह शत्रु हो या मित्र, असीम दयालु होना चाहिये।

सब कालों में, सब अवस्थाओं में अथवा कठोरतम परिस्थाओं में पूर्ण धैर्य से काम लेना चाहिये।

हृदय में सद्‌गुणों की अचल भावना हो। बुराई से प्रभावित न होना। बुराई के बदले भी भलाई करना।

सब जीवों के प्रति उनके कष्टों में सहानुभूति दिखलाना। दुर्बल एवं असहाय प्राणियों की रक्षा और शत्रु को भी दयापूर्वक कष्टों से बचाना चाहिये।

सब वस्तुओं के प्रति पूर्ण शांति सारे संसार के साथ शांति पूर्ण व्यवहार ईश्वरीय, नियमों के साथ पूर्ण एकता। ये ही गुण हैं जो पाप और पुण्य में सबसे ऊपर हैं।

जहाँ वासना हैं वहाँ शांति नहीं। जहाँ शांति है वहाँ वासना नहीं। जो मनुष्य शांति के लिये प्रार्थना करते हैं और वासना से चिपटे रहते हैं वह शांति नहीं प्राप्त कर सकते।

घृणा, प्रेम, वैमनस्य और शांति एक ही हृदय में एक

साथ निवास नहीं कर सकते। एक का यदि अतिथि रूप से सत्कार किया जावेगा तो दूसरे को अवश्य ही अपरिचित कह कर निकाल बाहर करना पड़ेगा।

वह वीर है जो दूसरों पर विजय प्राप्त करता है। परन्तु जो अपने ऊपर विजयी होता है वह महात्मा है। जो दूसरों पर विजयी होता है वह एक दिन अवश्य दूसरों द्वारा पराजित होता है। परन्तु जिसने अपने को जीता है वह किसी प्रकार भी दबाया नहीं जा सकता।

जिस मनुष्य ने वासना, क्रोध, घृणा, अभिमान, स्वार्थ, लोभ को जीत लिया मानों उसने संसार को जीत लिया। इस तरह वह शांति के शत्रुओं का नाश करता है।

शांति युद्ध नहीं करती। किसी का पक्षपात भी नहीं करती। किसी वैमनस्य शब्द का उच्चारण भी नहीं करती। शांति की विजय मौन में है।

जो बलपूर्वक जीत लिया गया हो उसका शरीर भले ही जीत लिया गया हो परन्तु उसका हृदय नहीं जीता जा सकता। वह भविष्य में और भी बड़ा शत्रु सिद्ध हो सकता है। परन्तु जो शांति और प्रेम से जीता गया है वह हृदय से परिवर्तित हो चुका है। अब वह विजेता का कभी भी शत्रु नहीं हो सकता।

जिन्हें पुण्य व सत्य की विजय में विश्वास नहीं होता वे कलंकित होकर पापाचार में पड़ जाते हैं।

यदि कोई पुरुष वास्तविक पुण्यात्मा बनना चाहता है तो उसे आवश्यक है कि पुरुषार्थ बने। नैतिक बल के बिना वास्तविक पुण्य वृत्ति नहीं हो सकती।

मनुष्य बुरे स्वभाव, घृणा, पेटूपन तथा अश्लील और

गर्हित विनोदों में अति कर अपना संहार कर लेता है और फिर जीवन को दोष देता है। उसे स्वयं अपने आपको दोष देना चाहिये। कुपात्र व्यक्ति अपने अवकाश के समय को गुप्त रूप से दुष्टता के कार्यों में व्यतीत करता है। इस प्रकार उसकी दुष्टता का कभी अन्त नहीं होता। पुण्यात्मा व्यक्ति के सामने वह कपट करता है, अपने अवगुणों को छिपाता है किन्तु जब प्रथम अनुसंधान में उसका वास्तविक चरित्र प्रकट हो जाता है तो वह फिर छद्मवेष कैसे धारण कर सकता है।

जिन व्यक्तियों पर अनेक मनुष्यों की आँख लगी रहती है और जिनकी ओर अनेक लोग हाथ उठाकर संकेत किया करते हैं उन कीर्तिशाली महान पुरुषों पर जनता की दृष्टि का बड़ा नियंत्रण रहता है। अतएव ऐसे सज्जनों को एकान्त में भी बहुत अधिक सावधान रहने की आवश्यकता है।

जो व्यक्ति अपने दुर्दान्त और भ्रान्त विचारों का नियंत्रण और दमन करने का प्रयत्न करता है वह प्रतिदिन अधिक बुद्धिमान होता जाता है। यद्यपि आनन्द मन्दिर की रचना कुछ समय के लिये पूरी नहीं जान पड़ती तथापि उसकी नींव डालने और दीवाल बनाने के लिये वह शक्ति संचय करता रहेगा और एक दिन वह अपने निर्मित सुन्दर आवास में एक चतुर महाशिल्पी के सदृश शांति पूर्वक विश्राम करता है।

शांति उसे ही प्राप्त होती है जो अपने ऊपर विजय प्राप्त करता है जो प्रति दिन अधिकाधिक आत्म संयम और मस्तिष्क को अधिकार में रखने का शांतिपूर्वक उद्योग करेगा।

जहाँ शांत मस्तिष्क है, वहाँ बल है, विश्राम है, वहीं प्रेम है, वहीं बुद्धि है। वहीं पर ऐसा व्यक्ति है जिसने अपने विरुद्ध

सफलता पूर्वक अगणित संग्राम विजित किये हैं। जिसने अपनी ही असफलताओं के विरुद्ध गुप्त रूप से अधिक क्लान्ति का सामना करने के पश्चात् अन्त में विजय प्राप्त की है।

वही व्यक्ति यथार्थ में चतुर है जो सांसारिक धंधों में फँसा रहने पर भी सदा शांत, भद्र और सन्तुष्ट रहता है ।

—o—

इस पुस्तक को समाप्त करने के पहिले अभी २ समाचार पत्रों में प्रकाशित महात्मा गाँधी का लेख उद्धृत करते हैं।

बुद्धि विकास बनाम बुद्धि विलास

त्रावणकोर और मद्रास के भ्रमण में विद्यार्थियों और विद्वानों के सहवास में मुझे ऐसा पता लगा कि मैं जो नमूने उनमें देख रहा था वे बुद्धि विकास के नहीं किन्तु बुद्धि विलास के थे। आधुनिक शिक्षा भी हमें बुद्धि विलास सिखाती है और बुद्धि को उलटे रास्ते ले जाकर उसके विकास को रोकती है। सेगाँव में पड़ा पड़ा मैं जो अनुभव कर रहा हूँ वह मेरी इस बात की पूर्ति करता दिखाई देता है। मेरा अवलोकन तो वहाँ अभी चल रहा है इसलिये इस लेख में आये हुये विचार उन अनुभवों के ऊपर आधार नहीं रखते। मेरे यह विचार तो जब मैंने फिनिक्स संस्था की संस्थापना की, तभी से हैं यानी १९०४ से।

बुद्धि का सच्चा विकास हाथ पैर कान आदि अवयवों के सदुपयोग से ही हो सकता है अर्थात् शरीर का ज्ञानपूर्वक उपयोग करते हुये बुद्धि का विकास सबसे अच्छी तरह और

जल्दी होता है। इसमें भी यदि पारिमार्थिक वृत्ति का मेल न हो तो बुद्धि का विकास इक तरफा होता है। पारिमार्थिक वृत्ति हृदय यानी आत्मा का क्षेत्र है। अतः यह कहा जा सकता है कि बुद्धि के शुद्ध विकास के लिये आत्मा और शरीर का विकास साथ २ तथा एकसी गति से होना चाहिये। इससे कोई अगर यह कहे कि ये विकास एक के बाद एक हो सकते हैं तो यह ऊपर की विचार श्रेणी के अनुसार ठीक न होगा।

हृदय बुद्धि और शरीर के बीच मेल न होने से जो दुःसह परिणाम होता आया है वह प्रकट है तब भी उलटे सहवास के कारण हम उसे देख नहीं सकते। गावों के लोगों का पालन पोषण पशुओं में होने के कारण वे मात्र शरीर का उपयोग यंत्र की भाँति किया करते हैं। बुद्धि का उपयोग वे करते ही नहीं। और उन्हें करना नहीं पड़ता।

हृदय की शिक्षा नहीं के बराबर है। जो न इस काम का रहा है न उस काम का। दूसरी ओर जब आधुनिक कालेजों तक की शिक्षा पर नजर डालते हैं तो वहाँ बुद्धि के विकास के नाम पर बुद्धि के विलास की तालीम दी जाती है। लोग समझते हैं कि बुद्धि के विकास के साथ शरीर का कोई मेल नहीं, पर शरीर को कसरत तो चाहिये ही इसलिये उपयोग रहित कसरतों से उसे निभाने का मिथ्या प्रयोग होता है। पर चारों ओर से मुझे इस तरह के प्रमाण मिलते ही रहते हैं कि स्कूल कालिजों से पास होकर जो विद्यार्थी निकलते हैं वे मेहनत मशक्कत के काम में मजदूरों की बराबरी नहीं कर सकते। जरासी मेहनत की तो माथा दुखने लगता है और धूप में घूमना पड़े तो चक्कर आने लगते हैं। यह स्थिति स्वाभाविक मानी जाती है। बिना जुते खेत

में जैसे घास उग आती है उसी तरह हृदय की वृत्तियाँ आप ही उगतीं और कुम्हिलाती रहती हैं। यह स्थिति दयनीय मानी जाने के बदले प्रशसनीय मानी जाती है।

इसके विपरीत अगर बचपन से बालकों के हृदय की वृत्तियाँ ठीक तरह से मोड़ी जाँय, व खेती चर्खा आदि उपयोगी कामों में लगाये जाँय और जिस उद्योग द्वारा उनका शरीर खूब कसा जा सके उस उद्योग की उपयोगिता और उसमें काम आने वाले औजारों वगैरह की बनावट आदि का उन्हें ज्ञान दिया जाय तो उनको बुद्धि का विकास सहज ही होता जाय। और नित्य उसकी परीक्षा भी होता जाय। ऐसा करते हुये जिस गणित शास्त्र आदि के ज्ञान की आवश्यकता हो वह उन्हें दिया जाय और विनोद के लिये साहित्यादि का ज्ञान भी देते जाँय तो तीनों वस्तुयें समतोल हो जाँय और कोई अंग उनका अविकसित न रहे। मनुष्य न केवल बुद्धि है न शरीर, न केवल हृदय या आत्मा। तीनों के एक समान विकास में ही मनुष्य का मनुष्यत्व सिद्ध होगा। इसमें सच्चा अर्थ शास्त्र है। इसके अनुसार यदि तीनों विकास एक साथ हों तो हमारी उलझी हुई समस्यायें अनायास सुलझ जाँय। यह विचार या इस पर अमल तो देश को स्वतन्त्रता मिलने के बाद होगा, ऐसी धारणा भ्रमपूर्ण हो सकती है। करोड़ों मनुष्यों को ऐसे २ कार्यों में लगाने से ही स्वतन्त्रता का दिन हम नजदीक ला सकते हैं।

—*—

नया सूचीपत्र ।

—*—

निराकार ग्रंथ माला की युगान्तरकारी पुस्तकों
का सभ्य संसार ने इतना मान किया है
कि यह पुस्तकें भारतवर्ष के प्रत्येक
स्त्री, पुरुष, युवा, वृद्ध, बाल,
के गले का हार
या
"अद्भुत-मित्र"
बन गई हैं । ऐसा ? कौन
भारतीय है जिसने इन पुस्तकों
को नहीं देखा । यदि आपने अब
तक यह पुस्तकें नहीं पढ़ीं हैं तो शीघ्रही
खरीद कर अपना जीवन सफल बनाइये ।

१ दिल्ली की शाहजादी ।

मुग़ल खान्दान के छठवें बादशाह औरङ्गजेब के जामाता महाराज छत्रपति शिवाजी को समस्त हिन्दू संसार जानता है । लेकिन जामाता शब्द को सुनकर शायद आप चक्करमें पड़

गये होंगे। महाराज शिवा जी के पुत्र शम्भा जी, जिनकी माता का नाम रोशनआरा था, औरङ्गजेब की प्यारी पुत्री थी जो दक्षिण में शिवाजी को ब्याही गई थी। मुसलमान इतिहासकारों ने अपनी कोशिश से इस मामले को दबा ही रक्खा था कि प्रगट न होने पावे परन्तु सच्चाई फूट निकली और यह रहस्यमय जीता जागता इतिहास चिरकाल के लिये प्रगट हो गया। प्रत्येक इतिहास प्रेमी को पढ़ना चाहिये। बढ़िया काग़ज सुन्दर छपाई पृष्ठ संख्या लगभग १०० मू० ॥)

२ माई का लाल।

गुरु गोविन्दसिंह और वीरबंदा की मुलाकात, दीवारों में चुने गये बालक जोरावरसिंह और फतेहसिंह के खून का बदला तुर्कों का मायाजाल और सेना का संगठन, सरहिन्द पर बंदा की चढ़ाई, सिक्खों की फूट, आशा पर तुषार, भीषण घोर संग्राम हिन्दू राज्य की जड़, पुत्र और ७४० वीरों के साथ वीर बंदा का वध वर्णन, ओजस्वी और वीरतापूर्ण कविता में पढ़िये। मूल्य।)

३ भारतीय कटार।

इस पुस्तक में कुँवरदेवी की कुरबानी और वीरत्व का असली परिचय, आधुनिक दुर्गा भवानी का प्रबल पराक्रम, जयादेवी की विजय, नीलदेगी की फुर्ती, रानी दुर्गावती का चातुर्य तथा वीरत्व, कर्मदेवी की कर्मठयता का जीवित जागृत

और ज्वलन्त सच्चा पाठ पढ़ाने वाला अद्भुत मसाला और कटार का गौरव दिखलाया गया है। मूल्य ।=)

४ वीर ललनाएँ।

इस पुस्तक में तुलसीबाई का विकट युद्ध वर्णन, वीर-बाला कोडमदे की वीरता, वीरांगना कमला का साहस महारानी कलावती की कीर्ति, स्फूर्ति, और पराक्रम, प्रमीला की प्रचण्ड पति भक्ति, साहस, मीराबाई की मान मर्यादा और ईश भक्ति, वीरबाला मुक्ता का शौर्य्य वृत्तान्त बड़ी ही सरल, सरस और ओजस्वी भाषा में लिखा गया है। मूल्य।=)

५ तलवार की धनी।

इस पुस्तक में अर्गल की रानी का पराक्रम, महारानी पद्मिनी का रण चातुर्य,महारानी लक्ष्मीबाई का सैन्य संचालन और विकट युद्ध, महारानी चंचल कुमारी की चंचलता और युद्ध शक्ति का अद्‌भुत और वीरपराक्रम के साथ उज्वल गुणगान संग्रह है पुस्तक प्रत्येक वीर ललना, लाल, लाड़िले लड़ाके, लठैत, लाल बुझक्कड़ के पढ़ने और संग्रह करने के योग्य है। लगभग ९० पृष्ट की पुस्तक का मूल्य ।=)

६ राजस्थान की सिंहनी।

इस पुस्तक में राजपूताने की वीर क्षत्री स्त्रियों में से दुर्गादेवी, किरण देवी और उर्मिला देवी की कीर्ति-कथा बड़ी

ही ओजस्वी भाषा में लिखी गई है पढ़कर चित्त फड़क उठता है। वीर रस से शराबोर इन वीरांगनाओं का वीर चरित्र अवश्य पढ़ें। मू० ।)

७ वीर क्षत्राणियां।

ऐसा कौन अभागा भारतीय होगा जिसने भारतीय वीर वीरांगनाओं का वीर भाव युक्त वीर चरित्र न सुना हो उन्हीं वीर दुर्गाओं का वीरत्व पूर्ण कटार कौशल इस पुस्तक में वर्णित है मूल्य लगभग २५० पृष्ठ की पुस्तक का केवल १।), सजिल्द १॥)

८ इन्दिरा बी० ए०

यह उपन्यास पं० सुदर्शनलाल जी त्रिवेदी 'चक्र' की लौह लेखनी का अद्भुत आविष्कार हैं। एक बार हाथ में लेकर बिना समाप्त किये छोड़ने का जी नहीं चाहता। जासूसी तिलस्मी और अय्यारी के चक्करदार उपन्यास पढ़ने वाले भी इसे पढ़ कर बिना सराहना किये नहीं रहते। बेचारी इन्दिरा का सुखी परिवार, उस पर दुर्दैव की मार, अनेकों असह्य घटनाओं का घटाटोप भीषण गर्जन तर्जन, उसके रक्षकों की मर्दानगी और जिन्दादिली देखकर दिल थर्रा जाता है। इस आपत्ति काल में भी जिस रमणी ने हिम्मत

नहीं हारी और सब दुख झेलते हुये अपना धर्म बचाया उसका जीता जागता अद्भुत वृतान्त इस पुस्तक में पढ़िये। मूल्य सजिल्द १।)

६ क्या ? क्या सीखें !!!

इसमें देश के मुख्य २ विद्वानों और महात्माओं के उपदेश हैं।

जिसमें—

आत्म-हत्या पाप है !

हिंसा त्याज्य है !

अत्याचार, पाप, छल, और

धूर्तता निन्द्य है:—

देश कल्याण का मार्ग प्रदर्शक है। वीरत्व का उत्पादक है। कायरता को पास नहीं फटकने देता। जिसे देश के नाम पर, आन पर, शान पर, मरने या कुछ करने का हौसला है वह तत्काल एक पुस्तक खरीद कर पढ़े मूल्य ॥।)

१० घरेलू उद्योग धन्धे ।

वह सभी शिक्षित, अशिक्षित तथा बेकार नवयुवक जो नौकरी की खोज में भटकते फिरते हैं और बेकारी के

कारण आत्महत्या तक करते पाये जाते हैं अब निश्चिन्त हो जावें। "घरेलू उद्योग धंधे" उन्हें अच्छा से अच्छा व्यापार बता कर सन्मार्ग पर लाकर, भर पेट रोटी दिला कर, परिवार के साथ शान से जिन्दगी बसर करने का पाठ पढ़ावेंगे जिससे वह अपने कुटुम्ब का पालन-पोषण कर अन्य बेकार लोगों को भी भले प्रकार काम पर लगा सकेंगे। देश की बेकारी दूर करने के लिये यदि गांव गांव के नवयुवक घरेलू उद्योग धन्धे पुनरुज्जीवित करने के लिये कटिबद्ध हो जाँय तो बेड़ा पार हो जाय। अधिक नहीं सिर्फ थोड़ी ही पूँजी से साबुन, तेल, स्याही अथवा अन्य जिस वस्तु का व्यापार आपको पसन्द आवे बड़े मजे में कर सकते हैं। मूल्य ।)

११ समाज का पाप।

भूमिका लेखक—विख्यात "आज" सम्पादक श्रीबाबूराव विष्णुपराड़कर

यह उपन्यास, कुछ सामाजिक कुरीतियों का जीता जागता चित्र है और डा० बनारसी प्रसाद 'भोजपुरी" सम्पादक 'सूर्य' की लेखनी का अद्भुत चमत्कार है। इस उपन्यास का मुख्य नायक नरेन्द्र एक सम्पन्न परिवार का लाड़ला पुत्र है जो पुरानी रूढ़ियों के चक्कर में फँस कर उकता जाता है और समाज में प्रचलित कुरीतियों को नष्ट

करने के लिये कटिबद्ध होता है। अपने इस कार्य में सफलता प्राप्त करने के हेतु खुफिया पुलिस की नौकरी पसन्द करता है जिसके द्वारा पाखण्डियों, रंगे सियारों, धूर्त संन्यासियों का भंडाफोड़ कर उनको अपनी करनी का फल भोगने के लिये बाध्य करता है। इसी प्रकार की एक नहीं अनेकों भीषण गुप्त घटनाओं का अपनी बुद्धि चातुरी और अभिन्न मित्र वीरेन्द्र के सहयोग से पता लगाकर ऐसा भण्डाफोड़ करता है कि देख सुनकर लोग आश्चर्य में पड़ जाते हैं। पुरानी वैदिक प्रणाली का प्रसार कर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का पाठ पढ़ना है। एक बार पुस्तक उठा लेने के पश्चात् बिना आद्योपान्त पढ़े तबियत नहीं भरती। मूल्य सजिल्द १।।।)

१२ सदाचार और शिष्टाचार।

(ले० श्री रामप्यारे त्रिपाठी-भूतपुर्व अध्यापक यू० पी० स्कूल करतल (कालिंजर) जिला बाँदा तथा यू० पी० स्कूल सिजमी और ब्रॉच तहसीली स्कूल किशुनपुर जिला फतेहपुर)

आज देश में जितना सदाचार और शिष्टाचार की आवश्यकता है उतनी ब्रह्मचर्य का नहीं। जिधर देखिये उधर ब्रह्मचर्य का ही प्रचार किया जाता है परंतु न जाने क्यों ब्रह्मचर्य का ह्रास हो रहा है और प्रत्येक स्कूल कालिज शहर प्रान्त कस्बा तथा गाँव के निवासी छोटे २ बालक और बालिकायें इस पापी विषय की ज्वाला में क्यों भस्मी भूत होते दिखाई देते हैं।

यदि वास्तव ब्रह्मचर्य मय जीवन बनाना है तो "सदाचार और शिष्टाचार" की रक्षा कीजिये और यह पुस्तक शीघ्रही खरीद कर पढ़िये मूल्य ।।।) सजिल्द १)

१३ ईश्वर और धर्म ही सर्वस्व है।

लेखक रामप्यारे त्रिपाठी "पोल प्रकाशक"।

आज ईश्वर और धर्म के नाम पर जो देश में भीषण ढोंग फैला हुआ हैं और जिनके कारण लोग नास्तिकता की ओर झुकते जा रहे हैं उनके कुतर्कों का उचित उत्तर देने और आस्तिकता प्रचार करने के लिये यह पुस्तक लिखी गई है। मूल्य केवल ।)

चटशाला।

(ले०—पोल प्रकाशक)

जब तक आप 'चटशाला' को नहीं पढ़ेंगे तब तक आपके दिमागी दरबे से प्याला, हाला, सुरा, सुराही का काल्पनिक वेदान्ती अथवा छायावादी कबूतर निकलेगाही नहीं। आपको पुस्तक विक्रेताओं की दुकान तक जाने की तकलीफ उठानी पड़ेगी और कड़ी मशक्कत के पूरे ।२ आने खर्च करने पड़ेंगे तब कहीं सुन्दर और सजिल्द पुस्तक प्राप्त कर सकेंगे।

पढ़ कर आप खिल उठेंगे। शराब की कपोल कल्पना की धारा में बहने वालों के लिये यह विष है। युवकों और विद्यार्थियों के लिये यह 'चटशाला' है। मन्दाग्नि से ग्रसित नागरिकों के लिये लवणभास्कर चूर्ण है। भ्रष्ट साहित्य के रचयिता भारत कुल कलंक, रसिक तुक्कड़ कवियों के लिये यह चाबुक है। शीघ्र मँगाइये—